पाठ्य पुस्तक

गद्य गंगा

प्रथम सेमिस्टर

बी.बी.ए./बी.एच.एम/एम.टी.ए

B.B.A/B.H.M/M.T.A

I SEMESTER

चयन आधारित क्रेडिट पद्धति

प्रधान संपादक

डॉ. शेखर

डॉ. शोभा. एल.

पकाशक:

प्रसारांग

बेंगलूरू केन्द्र विश्वविध्यालय

बेंगलूरू–560 001

पाठ्य पुस्तक

गद्य गंगा

प्रथम सेमिस्टर

बी.बी.ए./बी.एच.एम/एम.टी.ए

B.B.A/B.H.M/M.T.A

I SEMESTER

चयन आधारित क्रेडिट पद्धति

प्रधान संपादक

डॉ. शेखर

डॉ. शोभा. एल.

पकाशक:

प्रसारांग

बेंगलूरू केन्द्र विश्वविध्यालय

बेंगलूरू–560 001

GADYAGANGA: edited by Dr. Shekhar and Dr. Shobha L.
Published by Prasaranga, Bengaluru Central University,
Bengaluru-560001.
Pp: 88+vi

© बेंगलूरू केन्द्रविश्वविध्यालय
प्रथम संस्करण – 2019

प्रधान संपादक : डॉ. शेखर

प्रकाशक :
प्रसारांग:

बेंगलूरू केन्द्र विश्वविध्यालय,
बेंगलुरु–560 001.

भूमिका

बेंगलूरू विश्वविध्यालय 2014–15 शैक्षणिक वर्ष से सेमिस्टर पद्धति में सी.बी.सी.एस. स्कीम स्नातक वर्ग के लिए चला रहा है, किन्तु बेंगलूरू विश्वविध्यालय के त्रिभाजन के फलस्वरूप "बेंगलूरू केंद्रीय विश्वविध्यालय" की ओर से आगामी 2019–2020,2020–2021 तथा 2022–2022 शैक्षणिक वर्षों के लिए नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण भी उपर्युक्त आधार पर ही स्नातक वर्ग हेतु किया गया है।

इस पृष्टभूमि में हिन्दी–अध्ययन–मण्डल ने विभागाध्यक्ष डॉ.शेखर जी के मार्गदर्शन में पाठ्य–पुस्तक का निर्माण किया है।

संपादक – मण्डल का विश्वास है कि यह गध्य–संकलन छात्र–समुदाय के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। इस पाठ्य–पुस्तक के निर्माण में योग देनेवाले सभी के प्रति विश्वविध्यालय आभारी है।

इस संकलन को अल्प समय में सुन्दर रूप से छापने वाले कुलसचिव,बेंगलूरू केन्द्र विश्वविद्यालय तथा मैसूरू विश्वविद्यालयमुद्रणालय के कर्मचारियों के प्रति भी हम आभारी हैं।

प्रो जाफट. एस
उपकुलपति
बेंगलूरू केन्द, विश्वविध्यालय
बेंगलूरू

प्रकाशक की बात

बेंगलूरू केन्द्रीय विश्वविध्यालया ने स्नातक पुस्तक के लिए सेमिस्टर पद्धति (सी.बी.सी.एस} लागू किया है, उसके अनुसार हिन्दी–अध्ययन–मण्डल ने अपने विभागाध्यक्ष के मार्गदर्शन में पाठ्य–पुस्तक का निर्माण किया है ।

पाठ्य–पुस्तक को समय पर तैयार करने में प्रो. शेखर जी और प्रो. शोभा, एल जी ने बडा सहयोग दिया है। उनके प्रति मैं आभारी हूँ।

विश्वविध्यालय की ओर से पाठ्य–पुस्तक को प्रकाशित कराने में उपकुलपति प्रो. जाफट. एस जी ने अत्यन्त उत्साह दिखाया है । एतदर्थ मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ । इस पुस्तक को सुन्दर रूप से छापने वाले मुद्रणालय के कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभारी हूँ ।

संयोजक

प्रसारांग

बेंगलूरू केन्द्र विश्वविध्यालय

अध्यक्ष की बात

बेंगलूरू केन्द्रीय विश्वविध्यालय शैक्षणिक क्षेत्र में नये–नये विषयों को अपने अध्ययन की सीमा में ले रहा है। अध्ययन को आज के संदर्भ के अनुसार प्रस्तुत करने का प्रयत्न हो रहा है । साहित्यिक विषयों को आज की बदलती परिस्थितियों के अनुसार रूपित करने के उद्देश्य से पाठ्य–क्रम को प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सेमिस्टर पद्धति (सी.बि.सी.एस.) के अनुकूल स्नातक वर्गों के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण किया गया है। इस पाठ्य–पुस्तक के निर्माण में योग देनेवाले संपादकों के प्रति मैं आभारी हूँ ।

इन नये पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण में कुलपति महोदय प्रो.जाफट. एस जी ने अत्यधिक प्रोत्साहन दिया, एतदर्थ मैं इनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

पुस्तक के कुलसचिव,बेंगलूरू केन्द्र विश्वविद्यालय तथा मैसूरू विश्वविद्यालय मुद्रणालय के कर्मचारियों के प्रति भी हम आभारी हैं ।

डॉ. शेखर
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
बेंगलूरू विश्वविध्यालय

संपादक की कलम से:

हिन्दी साहित्य बहु – आयामी है। आदिकाल से आधुनिक काल तक की यात्रा के दौरान हिन्दी मे विपुल रूप से परिवर्तन और परिवर्धन होता रहा है। इस दौरान हिन्दी साहित्यिक विधावों मे विशेषतः गद्य के विभिन्न रूपों मे पर्याप्त रचनाएं हुई है, जिनसे हिन्दी साहित्य समृद्ध हुआ है।

हिन्दी, समन्वय– एकता और अखंडता की भाषा भी है। आधुनिक युग की सभी भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी के साथ हिन्दी मे समन्वय स्थापित किया है। यही समन्वय साहित्य मे भी पायी जाती है और यही उदाराता भाषा को भी उदार बनाया है। इसलिए हिन्दी भाषा और उसका साहित्य दोनों ही राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गये है।

गद्य विधा का यह संकलन बेंगलूरू केन्द्र विश्वविद्यालय के प्रथम सेमिस्टर बी.बी.ए./बी.एच.एम/एम.टी.ए(सी.बी.सी.एस) स्नातक वर्ग के लिए

चयन आधारित क्रेडिट पद्धतिपर आधारित पथ्य–क्रम है। इस गद्य संकलन का प्रमुख उद्देश्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों के विद्यार्थियों को हिन्दी गद्य साहित्य की विविध विधाओं से परिचित कराना है।

विद्यार्थियों की अभिरुचि और आवश्यकता को ध्यान में रखकर संकलन की पथ्यसामग्री को रोचक और ज्ञानवर्द्धक बनाने का प्रयास किया गया है।

इस संकलन में जिन साहित्यकारों कीरचनाएं संग्रहित हैं, उनके प्रति हम आभारी हैं। आशा है कि प्रस्तुत संकलन विद्यार्थियों में साहित्य को समझने में सहयोग करेगा और साथ ही उनमें सामाजिक सरोकारों की भावनाओं को मजबूत कतेगा। यह संकलन उनमें राष्ट्रीय चेतना और एकता के विचार को प्रबल बनाने में सफल होगा।

डॉ. शोभा. एल.

डॉ. शोभा. एल.

अनुक्रमणिका

1. सोना–कहानी 3

विध्यासागर नौटियाल

2. धिक्कार – कहानी 12

प्रेमचंद

3. जान से प्यारे – एकांकी 27

ममता कालिया

4. कर कमल हो गये – व्यंग 44

हरिशंकर परसाई

5. कीडे का लार:कपडे का तार – वैज्ञानिक लेख 52

प्रेमानन्द चन्दोला

6. देखना एक दिन – संस्मरण 62

दिनेश पाठक

7. उत्साह – निबंध 81

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

विद्यासागर नौटियाल

जन्म: 29 सितम्बर 1933 ,भागीरथी तट पर बसे मालीदेवल गाँव में, शिक्षा टिहरी, देहरादून, काशी हिन्दूविश्वविद्यालय सन 1954 में कल्पना अपनी पहली कहानी भैंस का कटया के प्रकाशन के साथ साहित्य जगत में अपनी पहचान स्थापित करवा लेने वाले विद्यासागर की साठ से अधिक कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी है। अपनी रचनाओं में वे पर्वतीयप्रदेश से बाहर नहीं निकलते। उस पहाड के दबे – कुचले लोगों के बारे में लिखते हैं, जो उनके अनुसार 'सदियों से मेरे भीतर भरा है।

बहुत छोटी उम्र में टिहरी–गढवाल रियासत के विरुद्ध छेडे गये जन आन्दोलन में शामिल होने के कारण विद्यासागर एक राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में जाने लगे। 1980 में देवप्रयाग टिहरी से कम्युनिस्ट विधायक निर्वाचित। टिहरी उत्तरकाशी के करीब – करीब समस्त ग्रामों का पैदल भ्रमण कर के अलावा उच्चतम हिमाच्छादित शिखरों की यात्राएँ भी की । चिपको आन्दोलन के प्रारम्भिक कार्यकर्ता।

टिहरी बाँध के निर्माण के फलस्वरूप अपने गाँव या शहर से बलात विस्थापित होने के बाद अब देहरादून में स्थायी तौर पर निवास।

सम्पर्क : डी– 8, नेहरू कलोनी, देहरादून, उत्तराखण्ड।

सोना

उसका नाम सोनी था औरलोग प्यारवश उसे सोना कहते। बचपन सें ही उस के सौंदर्य को देख लोग कहा करते–किसी सेठ घराने में ब्याही जाएगी जहाँ दस तोले की नथ पहन सके।

और ज्यों – ज्योंवह बडी होती लोग अपनी वाणी दुहराते। धीरे–धीरे सोनी भी समझने लगी और मन ही मन खुश होती इस बात से कि उसका ब्याह किसी सेठ घराने में होगा जहाँ बडी–से–बडी सो ने की नथ पहनेगी। सोचती–'लोग नथ देख कर ही उठेंगे सेठ की बहू है'।

सुन्दर, बडी सी सोने की नथ पहनने की खुशी में सोनी को उस दिन दर्द भूल गया जब उसकी नाक छेदी गयी–नाक को साधने के लिए यह चाँदी का सूत लगाए रहो, फिर तुम बडी हो जाओगी और सोने के नथ पहनोगी। माँ ने कहा।

सोनी की आयु बढती और उस की नाक का चाँदी की सूत भी मोटा होता जाता–नथ बहुत मोटी होगी, नाक को अभी से साधती रहो। माँ – बाप प्यार जताते ।

फूल के पौधे की तरह सोनी इकपत्ती, दुपत्ती, तिपत्ती होती गयी। प्रतिदिन उस की अंगों में उभार आता । हर बीता दिन उस के सौन्दर्य में कुछ योग कर जाता। हर आने वाली सुबह उसके यौवन को जगाने की प्रतीक्षा करती । सोने के फूल का पौधा मौसम बदलते ही और खूबसूरत लगता। देखनेवाले कह उठते–अब इस पर फूल

लगेगा, सूरजकमल का फूल, सोने के से रंग वाला।

सोना पानी भरने जाती; लोग कटाक्ष करते–क्या मटक–मटक कर चलती है जैसे अभी से सेठ की बहू बन गयी, नाक पर दस तोले की नथ लग गयी। सोना और मटक कर चलती–दस तोले की नथ मैं ही तो पहनूँगी।

सोना जवान हो गयी–माँगने वाले आने लगे।

एक बूढा दस दर्जे पास बेटे का बाप।

– अपनी मडकी की जन्मपत्री की टीप दे दो। दोनों की जन्मपत्री मिल जाए तो आगे भगवान का अधिकार।

– लडका क्या कर रहा है?

– अभी उसने इस महीने में दसवीं दर्जा पास किया है। आगे कुछ सरकारीनौकरी देखेगा।

– गहने?

– गहने–उसने कुछ नहीं। लडका पढा–लिखा है। किस्मत में होगा और परमेश्वर रूठेगा नहीं तो जिन्दगी में गहने–ही–गहने होंगे।

– भाई पढाई – लिखाई से कोई सेठ नहीं बन जाता। तुम ने लडके को पढा लिया तो अच्छा किया, आजकल बहुत पढा लेना भी बहुत जरूरी है। पर मैं अपनी बेटी को उसी घर में

दे सकता हूँ जहाँ से छः तोले की नथ आ सके।

– मैं ने लडके को पढा लिया अब वह चाहे तो जिन्दगी भर गहने ही बनाता रहे। पर मैं अपनी ओर से गहने नहीं बना सकता, यह मेरी सामर्थ्य से बाहर की बात है ।

– तो यह रिश्ता नहीं हो सकेगा।

पास बैठे नत्थू ने, जो अभी जवान था, सलाह दी–चाचा लडका दस दर्जे पास है। हमारे घरों में कौन इतना पढता है? मेरी बात मानो तो सोना का हाथ पकडा दो। जिन्दगी में गहने नहीं होंगे तो कोई बात नहीं । सुख तो होगा ।

– खबरदार नत्थू! ऐसी बात फिर मुँह से नहीं निकालना। जिन्दगी में उसे गहने नहीं मिलेंगे, एक अच्छी सी नथ नहीं पहनेगी, लोग देख कर रूआब मानेंगे तो और सुख क्या होगा? नंगी लडकी को क्या सुख हो सकता है?

– चाची को तो पूछ लो चाचा, देखें वे क्या कहतीं है।

– वह क्या कहेगी, उसकी कोई दूसरी राय थोडे ही हो सकती है। वह यह तो नहीं चाहेगी की उसकी लडकी की नाक पर एक छोटा सा चाँदी का सूत लटकता रहे।

– फिर भी पूछ तो लेना चाहिये।

– जा, तू ही पूछ आ।

नत्थू अंदर गया, सारी स्थिति समझाई। लडके के इल्म का बखान दिया।

– बेकार है बेटा। पढा–लिखा होगा तो अपने लिए। सोना को तो उससे कुछ भी नहीं मिलेगा। नहीं बैठेगी कुर्सी पर, नहीं घूमेगी गाडी पर, – कोई बात नहीं। घास काटेगी, गोबर ढोएगी पर नाक पर सोना तो पहनेगी! यह रिश्ता नहीं हो सकता।

– चाची, सोना को तो पूछ ले, उसकी क्या राय है?

– सोना को पूछने जरूरत ही नहीं है। वह कोई हम से अलग थोडे ही है।

– फिर भी उसका मन तो जाँच ले।

– सोना ने झाड कर जवाब दिया–ऐसी क्या हूँ मैं कोई छोकरी, बिना माँ–बाप की, जो जहाँ चाहो फेंक दो? सोना ने जान बूझ कर जोर से कहा।

– सुन ले रे नत्थू! अंदर के कमरे से चाची ने आवाज दी–सुन लिया सोना का जवाब?

– सुन लिया चाची।

– एक से एक आये। सुन्दर, तन्दुरुस्त, पढे–लिखे लडकों का बाप। माता–पिताहीन, खाते– कमाते लडकों के रिश्तेदार पर सोना का रिश्ता न हो सका।

जवान लडकी, खूबसूरत। 'बाप के घर में कुँवारी रह जाएगी क्या?' औरतों में चर्चा छिडी। 'घर पर ही बुढिया बनाने की ठान ली है'।

सोना का बाप अटल रहा – मेरी लडकी कुँवरी रह जाए मुझे मंजूर है। पर मैं दूँगा किसी खानदान में नहीं। शादी न हो तो न हो, मैं नंगे–भूखों को लडकी नहीं दे सकता। जिस घर से छः तोले की नथ न आ सके, वह भी कोई घर है? सोना की मा अटल, सोना अटल। आखिर छः तोले की नथ आई एक ठेकेदार, एक अनपढ लडके को लेकर। रिश्ता तय –हो गया। अगले महीने ब्याह।

शादी से पहले ही नथ आ गई, सोने की नथ का वजन पूरे छः तोले। रत्ती–भर कम नहीं, सोना ने पहन ली। दर्द हुआ पर कोई बात नहीं। गाँव की औरतों की बोलती बन्द हो गयी। बडे–बूढे अपनी पोतियों की नाक देखने लगे। गाँव की कुँवारे देख कर शरमा जाते – कभी मेरी भी बात चली थी। पर इतना भाग कहाँ? छः तोले की नथ, सेठ की बहू। किस्मत खुल गयी ठेकेदार की। ऐसा माल कहाँ मिलता ?

संयोग की बात। सोना का ब्याह हुआ और उसके पति को एक सडक के एक ठेके में हजारों का मुनाफा हो गया। ससुर का सीना फूल गया–घर में लक्ष्मी आई है।

सडक के ठेके से हुए इस मुनाफे का इजहार सोना की नथ में कुछ और सोना जोड उसका वजन बढाकर किया गया। हाथ, पाँव और गले के लिए भी सोने के गहने बनाए गये। 'बहू का भाग्य है, बहू पर ही लगेगा'। सोना का ससुर फूला न समाया।

अब वह चलती तो चलता कि कोई सोने की मूर्ति चल रही है। गाँव में कोई भी बाहरी आता तो सूरत देख कर कह उठता – 'ठेकेदार की बहू है।'

इकलौती लाडली बेटी का समाचार सुनकर बाप बोल उठा डेढ कौडी की इज्जतवाले आ जाते थे– 'लडकी दे दो साब'सारी भायात कहती थी 'दे दो जी, लडकी को एक–न–एक जगह देना ही तो है'। अब कहे जरा कोई गलती की। लडकी सोने की हो गयी। खानदानी लडका है। समधी खूब समझता है बहू की कीमत। लोग सुनते और चुप हो जाते।

सोना की गोद में एक बच्चा खेलने लगा। छोटा– सा बच्चा, रुई–सा मुलायम, सोना की ही तरह सुन्दर।

दिन भर वह अपने बच्चे के गोद में उठाए रहती। कभी अपने बच्चे को देखकर फूल उठती और कभी अपने शरीर के सोने के गहनों को देखकर।

बच्चा जब कुछ महिनों को हो गया तो उसे भी अपने मा के शरीर पर लगे सोने के गहनों से प्यार होने लगा। बच्चा बार बार उसके गहनों से खेलता। गहनों की चमक उसे आकर्षित किये रहती। अपनी मा के अलावा वह किसी की गोद में नहीं जाता। उनके शरीर पर कुछ भी तो नहीं चमकता था रोने लगता। माँ के सीने से लिपटा वह उसके आभूषणों से खेलता।

सोना का पति ने फिर मुनाफा कमाया । फिर नथ का वजन बढा। नथ

का वजन बढा और सोना की नाक दर्द करने लगी। यदा–कदा बच्चा भी उसे खींच बैठता और नाक दुखने लगती । नथ के भारी हो जाने से नाक छेद चौडा हो गया। कभी–कभी सोना को लगता कि कहीं नाक फट न जाए।

उसके पति ने फिर मुनाफा कमाया और अपने वैभव का प्रदर्शन करने के लिए फिर सोना की नथ में और सोना जोडा, ठीक वैसे ही जैसे कोई एम. ए. पास व्यक्ति पी. एच.डी. मिलने पर अपने साइन बोर्ड पर 'डा.' जोड दे।

उसकी नथ दिन–रात नाक दुखने लगी। वह चलती तो नथ हिलती, दर्द होता। सोने की नथ का ध्यान रखना पडता। थोडा सा दब जाती तो आँखों से आँसू निकाल बैठती। बच्चा नथ खींचता और नाक का छेद और चौडा हो जाता। सोना की नथ चौबीसों घंटे, लगातार कष्ट देती रहती।

जब नहीं सहा गया तो एक दिन सोना ने अपनी सास से कहा–नथ दर्द करती है, मैं बुलाक ही पहने रहूँगी।

सास ने सोने के माता पिता और उनके पुरखों को अपनी भाषा में पूजा करने के बाद डाँट सुनाई किसी को तो सोने देखने ही नहीं मिलता और कुलच्छनी तू कहती है मैं नहीं पहनूंगी। मुझे अपने बेटा प्यारा है। खबरदार जो ऐसी बात तू फिर जबान पर लाई। नथ तो सुहाग है। सुहागिनें कही रीती नाक रखती है।

– बुलाक तो रहेगी ही। नथ ने सारी नाक काट दी। एक पतली

सा झिल्ली रह गई है। पता नहीं कब टूट जाए।

– सेठ की बहू नाक पर एक बुलाक लिए फिरेगी ।हमें कोई माँगते है। तुझे हमरी इज्जत का तो ध्यान होना चाहिये।

– नाक टूट जाएगी तो?

– नाक टूटती नहीं है क्या? टूट ही जाए तो सिलवा लेंगे।

– कुछ दिन वह चुप रही किन्तु जब असह्य दर्द होने लगा तो उसने अपनी सास से फिर वही बात कही।

सास ने भौंहे तान ली–तेरे बाप ही ने तो कहा था कि मैं लडकी वहाँ दूँगा जहाँ से छह तोले का नथ आ सके। उस वक्त तुझे क्या हो गया था? चली जाती किसी और के घर। हमने कोई कसम खाई थी तुझे लाने की?

सोना अपना–सा मुँह लिए, आँखों में सफेद बडी बडी बूँदे लेकर किसी ओर चल दी। अपने बच्चे को उसके छाती से छिपका लिया।

ठेके के काम समाप्त कर उसका पति घर लौट आने वाला था। सोना सोचती रही इस बार फिर मुनाफा होगा और फिर नथ का वजन बढाया जाएगा। कितना अच्छा हो अगर इस वक्त घाटा ... नहीं। नहीं। ऐसा कभी न हो। परमेश्वर उन की दिन दुगनी और रात चौगुनी आय करता रहे। पर नाक? नथ?

उसका पति लौट आया और और इस बार भी कई हजार रुपए कमाकर लाया। सोना सिहर गई –'अब फिर वे नथ में सोना

जोडेंगे।'

सोना ने अपने मन की व्यथा पति से कह सुनाई। पति आगबबूला होगया तुझ अभागिन को सोना नहीं, राख देने चहिये थी ।कहाँ से ले आये अभागिन को! मेरा दिवाला निकल गया क्या, जो तू नाक पर खाली बुलाक रखेगी? लोग क्या कहेंगे 'ठेकेदार की स्त्री, खाली नाक!'नाक की नथ घराने का वैभव बताती है ।

उस रात सोना को नींद न आई। सुबकने लगी तो सास चिल्ला उठी–कुलटा, कुलच्छिनी, इतने महीनों के बाद तो वह घर लौट आया है और तू रो रही है। यह जाल बिछाकर अपशकुन पैदाकर रही है। रोती अपने माँ बाप के लिए है? लडके का तो कुछ ख्याल रख। ठाकुराइन! मुझे अपना बेटा प्यारा है। उस के घर आने पर तू हँसने के बाजाय रो रही है तो कल सुबह अपनी मायके चली जा। जिन्होने जाया, वे तेरा जो चाहे करें।

सोना को होश आया और वह स्वयं डर गयी। अंधकार में हाथ जोड कर मन – ही– मन प्रार्थना की भगवान मेरा सुहाग अमर रहे। इससे पहले कि सोना का पति नथ को भारी बनाने के लिए उसे सोना की नाक से निकालकर सुनार के पास ले जाता, नथ स्वयं ही नाक तोडकर जमीन पर आ गयी।

– नाक सिलवा दो । सास ने कहा ।

और इस नथ को सुनार के पास ले जाकर एक तोला सोना बढवा दो । अब यह दस तोले की हो जाएगी । ससुर का स्वर था ।

प्रेमचन्द

समय:–1880 से 1936. उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द आधुनिक हिन्दी कहानी के जनक माने जाते हैं। सही अर्थों में इनका साहित्य भारत के राजनैतिक,सामाजिक एंव आर्थिक जीवन का दर्पण है। इनका जन्म वारणासी के निकट लमही नामक गाँव के एक सामान्य कायस्त परिवार में हुआ बी.ए.तक की शिक्षा प्राप्त कर शिक्षक बने। शिक्षा विभाग से उन्नति करके इन्स्पेक्टर के पद पर पहुँचे। 1916 ई.में नौकरी को त्याग पत्र देकर उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन साहित्य साधना में लगा दिया। पहले उर्दु में नवाबराय के नाम से लिखते थे।फिर हिन्दी में प्रेमचन्द के नाम से लिखने लगे। इसी कारण से इनकी भाषा में उर्दु,फ़रसी और हिन्दी का त्रिवेणी संगम हैं।प्रेमचन्द की कहानियों की संख्या 300 से अधिक मानी जाती है।यह कहानियाँ मानस सरोवार में संकलित हैं।प्रमुख उपन्यास गोदान,सेवा सदन,कर्मभूमि,रंगभूमि,गबन,निर्मला,प्रतिज्ञा आदि।प्रेमचन्द युग्पुरुष की उपादी से जाने जाते है।

धिक्कार

1.

ईरान और यूनान में घोर संग्राम हो रहा थाईरानी दिन – दिन बढते जाते थे और यूनान के लिए संकट का सामना था। देश के सारे व्यवसाय बन्द हो गए थे, हल की मुटिया पर हाथ रखनेवाले किसान तलवार की मुठिया पकडने के लिए मजबूर हो गए, डंडी तौलने वाले भाले तौलते थे। सारा देश आत्मरक्षा के लिए तैयार हो गया था। फिर भी शत्रु के कदम दिन–दिन आगे ही बढते आते थे। जिस ईरान को यूनान कई बार कुचल चुका था,वही ईरान आज क्रोध के आवेश की भाँती सिर पर चढा आता था। मर्द तो रणक्षेत्र में सिर कटा रहे थे और स्त्रियाँ दिन – दिन की निराशाजनक खबरें सुनकर सूखी जाती थी। क्योंकर लाज की रक्षा होगी? प्राण का भय न था, सम्पत्ति का भय न था, भय था मर्यादा का। विजेत गर्व से मतवाले होकर यूनानी ललनाओं की ओर घूरेंगे, उनके कोमल अंगों को स्पर्श करेंगे,उनको कैद कर ले जाएँगे! उस विपत्ति की कल्पना ही से इन लोगों के रोएँ खडे हो जाते थे।

आखिर जब हालत बहुत नाजुक हो गई, तो कितने ही स्त्री–पुरुष मिलकर डेल्फी के मन्दिर में गये और प्रश्न किया–देवी, हमारे ऊपर देवताओं की यह वक्र दृष्टि क्यों है? हमसे एसा कौन– सा

अपराध हुआ है? क्या हमने नियमों का पालन नहीं किया, कुर्बानियाँ नहीं की, व्रत नहीं रखे? फिर देवताओं ने क्यों हमारे सिरों से अपनी रक्षा का हाथ उठा लिया?

पुजारिन ने कहा– देवताओं की असीम कृपा भी देश को द्रोही के हाथ से नहीं बचा सकती। इस देश में अवश्य कोई–न–कोई द्रोही है। जब तक उसका वध न किया जायेगा, देश के सिर से यह संकट न टलेगा।

देवी, वह द्रोही कौन है?'

'जिस घर से रात को गाने की ध्वनि आती हो, जिस घर से दिन को सुगन्ध की लपटें आती हों,जिस पुरुष की आँखे में मद की लाली झलकती हो, वही देश का द्रोही है।'

लोगों ने द्रोही का परिचाय पाने के लिए और भी कितने ही प्रश्न किए, पर देवी ने कोई उत्तर न दिया।

युनानियों ने द्रोही की तलाश करनी शुरू की। किसने घर में से रात को गाने की आवाजें आती हैं? सारे शहर में संध्या होते स्यापा– सा छा जाता था। अगर कोई आवाज सुनाई देती थीं तो रोने की; हँसी और गाने की आवाज कहीं न सुनाई देती।

2.

दिन को सुगन्ध की लपटें किस घर से आती है? लोग जिधर जाते थे, उधर से दुर्गन्ध आती थी। गलियों में कूडे के ढेर पडे थे,

किसे इतनी फुरसत थी कि घर की सफाई करता, घर में सुगन्ध जलाता; धोबियों का अभाव था अधिकांश लडने चले गये थे, कपडे तक न घुलते थे; इत्र–फुलेल कौन मलत!

किसकी आँखों में मद की लाली झलकती है? लाल आँखें दिखाई देती थी; लेकिन यह मद की लाली न थी, यह आँसुओं की लाली थी। मदिरा की दुकानों पर खाक उड रहीं थी। इस जीवन और मृत्यु के संग्राम में विलास की किसे सूझता! लोगों ने सारा शहर छान मारा; लेकिन एक भी आँख ऐसी नजर न आई, जो मद से लाल हो।

कई दिन गुजर गए। शहर में पल–पल–भर पर रणक्षेत्र से भयानक खबरें आती थी और लोगों के प्राण सूखे जाते थे।

आधी रात का समय था। शहर में अन्धकार छाया हुआ था, मानो श्मशान हो। किसी की सूरत न दिखाई देती थी। जिन नाव्याशालाओं में तिल रखने की जगह न मिलती थी, वहाँ सियार बोल रहे थे। मन्दिरों में न गाना होता था, न बजाना। प्रासादों में अन्धकार छाया हुआ था।

एक बूढा युनानी जिसका इकलौता लडका लडाई के मैदान में था,घर से निकला और न–जाने किन विचारों की तरंग में देवी के मन्दिर की ओर चला। रास्ते में कहीं प्रकाश न था,कदम–कदम पर ठोकरें खाता था; पर आगे बढता चला जाता। उसने निश्चय कर लिया था कि या तो आज देवी से विजय का वरदान लूँगा या उनके चरणों पर अपने को भेंट कर दूँगा।

3

सहसा वह चौंक पडा। देवी का मन्दिर आ गया था। और उसके पीछे की ओर किसी घर से मधुर संगीत की ध्वनि आ रही थी। उसको आश्चर्य हुआ। इस निर्जन स्थान में कौन इस वक्त रंगरेलियाँ मना रहा है। उसके पैरों में पर–से लग गए, मन्दिर के पिछवाडे जा पहुँचा।

उसी घर से, जिसमें मन्दिर की पुजारिन रहती थी, गाने की आवाजें आती थी। वृद्ध विस्मित होकर खिडकी के सामने खडा हो गया। चिराग तले अँधेर?

बूढे ने द्वार से झाँका, एक सजे हुए कमरे में मोम बत्तियाँ झाडों में जल रही थी, साफ–सुथरा फर्श बिछा हुआ था और एक आदमी मेज पर बैठा हुआ गा रहा था। मेज पर शराब की बोतल और प्यालियाँ रखी हुई थीं। दो गुलाम मेज के सामने हाथ में भोजन के थाल लिये खडे थे, जिनमें से मनोहर सुगन्ध की लपटें आ रही थी।

बूढे युनानी ने चिल्लकर कहा–यही देशद्रोही है, यही देशद्रोही है!

मन्दिर की दीवारों ने दुहराया–द्रोही है!

बगीचे की तरफ से आवाज आयी–द्रोही है!

मन्दिर की पुजारिन ने घर में से सिर निकालकर कहा–हाँ, द्रोही है!

यह देशद्रोही उसी पुजारिन का बेटा पासोनियस था। देश से रक्षा के जो उपाय सोचे जाते, शत्रुओं का दमन करने के लिए जो निश्चय किए जाते, उनकी सूचना वह ईरानियों को दे दिया करता था। सेनाओं की प्रत्येक गति की खबर ईरानियों कोमिल जाती थी और उन प्रयत्नों को विफल बनाने के लिए वे पहले से तैयार हो जाते थे। यही कारण था कि युनानियों को जान लडा देने पर भी विजय न होती थी। इसी कपट से कमाए हुए धन से वह भोग–विलास करता था। उस समय जब कि देश पर घोर संकट पडा हुआ था, उसने अपने स्वदेश को अपनी वासनाओं के लिए बेच दिया था। अपने विलास के सिवा उसे और किसी बात की चिन्ता ना थी,कोइ मरे या जिए,देश रहें या जाय,उसकी बला से। केवल अपने कुटिल स्वार्थ के लिए देश की गर्दन में गुलामी की बेडियाँ डलवाने पर तैय्यर था। पुजारिन अपने बेटे के दुराचरण से अनभिज्ञ थी। वह अपनी अँधेरी कोठरी से बहुत कम निकलती,वहीं बैठी जप– तप किया करती थी। परलोक–चिन्तन में उसे इहलोक की खबर न थी,मनोन्द्रियों ने बाहर की चेतना को शून्य–सा कर दिया था। वह इस समय भी कोठरी के द्वार बंद किए देवी से अपने देश के कल्याण के लिए वन्दना कर रही थी कि सहसा उसके कानों में आवाज आयी–यही द्रोही है, द्रोही है।

उसने तुरन्त द्वार खोलकर बाहर की ओर झाँका,पासोनियस के कमरे से प्रकाश की रेखाएँ निकल रही थीं और उन्हीं रेखाओं पर संगीत की लहरें नाच रहीं थीं। उसके पैर–तले से जमीन–सी निकल गयी, कलेजा धक–से हो गया। ईश्वर! क्या मेरा बेटा देशद्रोही है ?

आप–ही–आप, किसी अन्त:प्रेरणा से पराभूत होकर वह चिल्ल उठी–हाँ यही देशद्रोही है !

4

युनानी स्त्री–पुरुष झुण्ड–के–झुण्ड उमड पडे और पासोनियस के द्वार पर खडे होकर चिल्लाने लगे–यही देशद्रोही है!

पासोनियस के कमरे की रोशनी ठंडी हो गई थी, संगीत भी बन्द था; लेकिन द्वार पर प्रतिक्षण नगरवासियों का समूह बढता जाता था और रह–रहकर सहस्रों कंठों से ध्वनि निकलती थी–यही देशद्रोही है!

लोगों ने मशालें जलायी और अपने लाठी–डंडे सँभालकर मकान में घुस पडे। कोई कहता था–सिर उतार लो। कोई कहता था–देवीं के चरणों पर बलिदान कर दो। कुछ लोग उसे कोठे से नीचे गिरा देने पर आग्रह कर रहे थे।

पासोनियस समझ गया कि अब मुसीबत की घडीं सिर पर आ गई। तुरन्त जीने से उतरकर नीचे की ओर कहीं शरण की आशा न देखकर देवी के मन्दिर में जा घुसा।

अब क्या किया जाय? देवी की शरण जाने वाले को अभय–दान मिला जाता था। परम्परा से यही प्रथा थी। मन्दिर में किसी की हत्या करना महापाप था।

लेकिन देशद्रोही को इतने सस्ते कौन छोडता? भाँति–भाँति

के प्रस्ताव होने लगे—

'सुअर के हाथ पकडकर बाहर खींच लो।'

'ऐसे देशद्रोही का वध करने के लिए देवी हमें क्षमा कर देंगी।'

'पत्थरों से मारो,पत्थरों से; आप निकलकर भागेगा।'

'निकलता क्यों नहीं रे कायर! वहाँ क्या मुँह में कालिख लगाकर बैठा हुआ है?'

रात–भर यहीं शोर मचा रहा और पासोनुयस न निकला। आखिर यह निश्चय हुआ कि मन्दिर की छत खोदकर फेंक दी जाय और पासोनियस दोपहर की तेज धूप और रात की कडाके की सरदी में आप ही आप अकड जाय। बस फिर क्या था,आन की आन में लोगों ने मन्दिर की छत और कलश ढा दिए।

अभागा पासोनियस दिन–भर तेज धूप में जडा रहा। उसे जोर की प्यास लगी; लेकिन पानी कहाँ? भूख लगी,पर खाना कहाँ? सारी जमीन तवे की भाँति जलने लगी;लेकिन छाँह कहाँ?इतना कष्ट

उसे जीवन भर में न हुआ था। मछली की भाँति तडपता था और चिल्लाकर लोगों को पुकारता था; मगर वहाँ कोई उसकी पुकार सुनने वाला ना था। बार–बार कसमें खाता था कि अब फिर मुझसे ऐसा अपराध न होगा; लेकिन कोई उसके निकट न आता था। बार–बार चाहता था कि दीवार से टकराकर प्राण दे दे; लेकिन यह आशा

रोक देती थी कि शायद लोगों को मुझपर दया आ जाय। वह पागलों की तरह जोर–जोर से कहने लगा–मुझे मार डालो,मार डालो,एक क्षण में प्राण लेलो ,इस भाँती जला–जलाकर न मारो। ओ हत्यारों,तुमको जरा भी दया नहीं!

दिन बीता और रात–भयंकर रात–आई। ऊपर तारागण चमक रहे थे,मानो उसकी विपत्ती पर हँस रहे हों। ज्यों–ज्यों रात भीगती थी, देवी विकराल रूप धारण करती जाती थी। कभी वह उसकी ओर मुहँ खोलकर लपकती, कभी उसे जलती हुई आँखों से देखती। उधर क्षण–क्षण सरदी बढती जाती थी,पासिनियस के हाथ–पाँव अकडने लगे,कलेजा काँपने लगा,घुटनों में सिर रखकर बैठ गया और अपनी किस्मत को रोने लगा; कुरते को खींचकर कभी पैरों को छिपाता,कभी हाथों को,यहाँ तक कि इस खींचा–तानी में कुरता भी फट गया। आधी रात जाते–जाते बर्फ गिरने लगी। दोपहर को उसने सोचा,गरमी ही सबसे कष्टदायक है। इस ठंड के सामने वह गरमी की तकलीफ भूल गया।

आखिर शरीर में गरमी लाने के लिए एक हिकमत सूझी । वह मंदिर में इधर–उधर दौडने लगा; लेकिन विलासी जीव था, जरा देर में हाँफकर गिर पडा।

5

प्रातःकाल लोगों ने किवाड खोले तो पासोनियस को भूमी पर पडे देखा। मालूम होता था,उसका शरीर अकड गया है। बहुत चीखने–चिल्लाने पर उसने आँख खोली; पर जगह से हिल न

सका। कितनी दयनीय दशा थी,किन्तु किसी को उस पर दया न आई। यूनान में देशद्रोह सबसे बडा अपराध था और द्रोही के लिए कहीं क्षमा न थी,कहीं दया न थी।

एक–अभी मरा नहीं है?

दूसरा–द्रोहियों को मौत नहीं आती!

तीसरा–पडा रहने दो,मर जायगा।

चौथा–अपने किए की सजा पा चुका,अब छोड देना चाहिए!

सहसा पासोनियस उठ बैठा और उद्दण्ड भाव से बोला–कौन कहता है कि इसे छोड देना चाहिये! नहीं,मुझे मत छोडना,वरना पछताओगे। मैं स्वार्थी हूँ,विषय–भोगी हूँ,मुझ पर भूलकर भी विश्वास न करना;आह! मेरे कारण तुम लोगों को क्या–क्या झेलना पडा,इसे सोचकर मेरा जी चाहता है कि अपनी इन्द्रियों को जलाकर भस्म कर दूँ। मैं अगर सौ बार जन्म लेकर इस पाप का प्रायश्चित करूँ,तो भी मेरा उद्धार न होगा। तुम भूलकर भी मेरा विश्वास न करो। मुझे स्वयं अपने ऊपर विश्वास नहीं। विलास के प्रेमी सत्य का पालन नहीं कर सकते। मैं अब भी आपकी कुछ सेवा कर सकता हूँ,मुझे ऐसे–ऐसे गुप्त रहस्य मालूम हैं,जिन्हें जानकर आप ईरानियों का संहार कर सकते है;लेकिन मुझे अपने ऊपर विश्वास नहीं है और आपसे भी यह कहता हूँ कि मुझ पर विश्वास न कीजिए। आज रात को देवी की मैंने सच्चे दिल से वन्दना की है और उन्होंने मुझे ऐसे यन्त्र बताए है,जिनसे हम शत्रुओं को परास्त कर सकते हैं,ईरानियों के बढते हुए दल को आज भी आन की बान

में उडा सकते हैं। लेकिन मुझे अपने ऊपर विश्वास नहीं है। मैं यहाँ से बाहर निकलकर इन बातों को भूल जाऊँगा। बहुत संभव है कि फिर ईरानियों की गुप्त सहायता करने लगूँ,इसलिए मुझ पर विश्वास न कीजिए।

एक यूनानी–देखो–देखो,क्या कहता है?

दूसरा–सच्चा आदमी मालूम होता है।

तीसरा–अपने अपराधों को आप स्वीकार कर रहा है।

चौथा– इसे क्षमा कर देना चाहिए और वह सब बातें पूछ लेनी चाहिए।

पाँचवा–देखो,यह नहीं कहता कि मुझे छोड दो। हमको बार–बार याद दिलाता जाता है कि मुझ पर विश्वास न करो!

छठा–रात–भर के कष्ट ने होश ठंडे कर दिये,अब आँखे खुली हैं।

पासोनियस–क्या तुम लोग मुझे छोडने की बातचीत कर रहे हो?मैं फिर कहता हूँ मै विश्वास के योग्य नहीं हूँ मैं द्रोहि हूँ। मुझे ईरानियों के बहुत–से भेद मालूम हैं। एक बार उनकी सेना में पहुँच जाऊँ,तो उनका मित्र बनकर सर्वनाश कर दूँ;पर मुझे अपने ऊपर विश्वास नहीं है।

एक यूनानी–धोखेबाज इतनी सच्ची बात नहीं कह सकता।

दूसरा–पहले स्वार्थान्ध हो गया था;पर अब आँखें खुली है!

तीसरा–देशद्रोही से भी अपने मतलब की बातें मालूम कर लेने में कोई हानि नहीं है। अगर वह अपने वचन पूरे करे,तो हमें इसे छोड देना चाहिए।

चौथा–देवी की प्रेरणा से इसकी यह कायापलट हुई है।

पाँचवाँ–पापियों में भी आत्मा का प्रकाश रहता है और कष्ट पाकर जागृत हो जाता है। यह समझना कि जिसने एक बार पाप किया,वह फिर कभी पुण्य कर ही नहीं सकता,मानव–चरित्र के एक प्रधान तत्व का अपवाद करना है।

छठा–हम इसको यहाँ से गाते–बजाते ले चलेंगे। जन–समूह को चकमा देना कितना आसान है। जनसत्तावाद का सबसे निर्बल अंग यहीं है। जनता तो नेक और बद की तमीज नहीं रखती।उस पर धूर्तों,रँगे सियारों का जादू आसानी से चल जाता है। अभी एक दिन पहले जिस पासोनियस की गर्दन पर तलवार चलायी जा रही थी,उसी को जुलूस के साथ मन्दिर से निकालने की तैयारियाँ होने लगी,क्योंकि वह धूर्त था और जानता था कि जनता की कील क्योंकर घुमाई जा सकती है।

एक स्त्री–गाने–बजानेवालों को बुलाओ,पासोनियस शरीफ है।

दूसरी–हाँ–हाँ,पहले चलकर उससे क्षमा माँगो,हमने उसके साथ जरूरत से ज्यादा सख्ती की।

पासोनियस–आप लोगों ने पूछा होता,तो मैं कल ही सारी बात

आपको बता देता,तब आपको मालूम होता कि मुझे मार डालना उचित है या जीता रखना।

कई स्त्री–पुरुष–हाय–हाय! हमसे बडी भूल हुई। हमारे सच्चे पासोनियस।

सहसा एक वृद्धा स्त्री किसी तरह से दौडती हुई आयी और मन्दिर के सबसे ऊँचे जीने पर खडी होकर बोली–तुम लोगों को क्या हो गया है। यूनान के बेटे आज इतने ज्ञानशून्य हो गए हैं कि झूठे और सच्चे में विवेक नहीं कर सकते? तुम पासोनियस पर विश्वास करते हो? जिस पासोनियस ने सैकडों स्त्रियों और बालकों को अनाथ कर दिया,सैकडों घरों में कोई दिया जलाने वाला न छोडा,हमारे देवताओं का,हमारे पुरुषों का घोर अपमान किया,उसकी दो–चार चिकनी–चुपडी बातों पर तुम इतने फूले उठे। याद रखो,अब की पासोनियस बाहर निकला,तो फिर तुम्हारी कुशल नहीं। यूनान पर ईरान का राज्य होगा और यूनानी ललनाएँ ईरानियों की कुदृष्टि का शिकार बनेंगी। देवी की आज्ञा है कि पासोनियस फिर बाहर न निकलने पाए। अगर तुम्हें अपना देश प्यारा हैं,अपने पुरुषों का नाम प्यारा है,अपनी माताओं और बहिनों की आबरू प्यारी है, तो मन्दिर के द्वार को चुन दो,जिसमें देशद्रोही को फिर बाहर निकलने और तुम लोगों को बहकाने का मौका न मिले। यह देखो,पहला पत्थर मैं अपने हाथों से रखती हूँ।

लोगों ने विस्मित होकर देखा–यह मन्दिर की पुजारिन और पासोनियस की माता थी।

दम के दम में पत्थरों के ढेर लग गए और मन्दिर का द्वार चुन दिया गया। पासिनियस भीतर दाँत पीसता रह गया।

वीर माता, तुम धन्य हो ! ऐसी ही माताओं से देश का मुख उज्ज्वल होता है,जा देशहित के सामने मातृ–स्नेह की धूल–बराबर भी परवाह नहीं करती! उनके पुत्र देश के लिए होते हैं,देश पुत्र के लिए नहीं होता।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।

– आदिशङ्कराचार्य

(मानसरोवर भाग 3 में संकलित)

ममता कालिया

जन्म : 1940

एकांकी संग्रह: आत्मा आठन्नी का नाम है

हिन्दी साहित्य में ममता कालिया का नाम भली–भाँति परिचित होते हुए एकांकी लेखन में सबसे नया हस्ताक्षर है। अभी तक कहानी, कविता और उपन्यास से सम्बद्ध इस लेखिका ने अब अपनी लेखनी एकांकी–रचना के क्षेत्र में उठाई है, उनके एकांकी दूरदर्शन और आकाशवाणी के माध्यम से निरन्तर देखे व सराहे गये हैं विशेषकर दिल्ली दूरदर्शन से प्रदर्शित एकांकी 'आप न बदलेंगें'। ममता कालिया की प्रसिद्ध पुस्तकों में उनके उपन्यास 'बेधर', 'नरक–दर–नरक' व 'प्रेम कहानी' हैं। उनके कहानी संग्रह 'छुटकारा', 'सीट नं0 छह' और 'एक अदद औरत' अपनी तेजबयानी मौलिकता और उन्मुक्तता के कारण बहुचर्चित रहे हैं।

विभिन्न नगरों महानगरों में रहने के कारण ममता कालिया की रचनाओं में मनुष्य के दैनिक संघर्ष के प्रति सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण मिलता है। लेखिकाओं के सामान्यतः सीमित सरोकार से एकदम अलग ममत का चेतना क्षेत्र व्यापक, विविध और विलक्षण है। उन्होने हर वर्ग वा स्तर की स्त्री की पीडा, प्रताड़ना व परिस्थिति को समझने का प्रयत्न किया है। स्त्री–पुरुष सम्बन्धों में समानता को सबल समर्थक ममता कालिया अपने एकांकियों के माध्यम से समकालीन समस्याओं पर विचार करती प्रतीत होती है। अपनी रचनात्मक तिलमिलाहट व्यक्त करने हेतु उनके पास दो सशक्त

हथियार हैं, करूणा और व्यंग्य। वे अपने विषय व पात्र रोजमर्रा के गीवन से उठाती हैं । 'जन से प्यारे' उन्का नवीनतम एकांकी हैं। ममता जी भाषा शैली की सहजता व खुलेअन से पाठक स्वतः प्रभावित हो जाता है। कुछ ही शब्दों में बहुत कुछ संप्रेषित करना उनके लिए एक सहज बात है। हिन्दी के अलावा वे अंग्रेजी में भी वे निरन्तर लिखती हैं । पिछले कई वर्ष से वे इलाहाबाद में रहती हैं व एक कांलेज की प्रिंसिपाल हैं।

जान से प्यारे

पात्र– परिचय

डॉ. कौशिक– युवा वैज्ञानिक

अविनाश–डॉ. कौशिकका सहयोगी

पुरुष

पत्नी–दोनों बेटों की पत्नियाँ

छोटू– किशन का बेटा

किशन–मृत्तक का पहला बेटा

नवयुवक– मृतक का पुत्र

गिरिजा–मृतक की बहू

नवयुवती–क्याप्टन शर्मा की विधवा

पति–दिवंगता कम्मो का पति

(जिस समय मंच पर प्रकाश होता है, नौजवान वैज्ञानिक डॉ.कौशिक अपनी प्रयोगशाला में परीक्षण कर रहें हैं।

उसके आस– पास माइक्रोस्कोप, परखनली, बीकर और जार नजर आ रहे हैं। उनका सहयोगी अविनाश भी उनके साथ–साथ लगा हुआ है। एकाएक डॉ. कौशिक के चेहरे पर खुशी और उत्तेजना आती है।)

डॉ. कौशिक: यूरेका, मैंने ढूँढ लिया, मैंने ढूँढ़ लिया। तुमने देखा अविनाश कैसे वह मरा हुआ काँक्रोच उस घोल को डालने से अभी– अभी जिन्दा होकर चल दिया।

अविनाश : (शंका से) शायद वह काँक्रोच अभी पूरी तरह मरा नहीं था।

डॉ. कौशिक: (उसी जोश में) तुम्हें पता है उसे मरे हुए छः घंटे हो चुके थे।

आविनाश: (माथे का पसीना पोंछते हुए) बडी बेढब चीज है काँक्रोच। आप उसे चप्पल से कुचल दें, संडसी से दबा दें। पहाड से गिरा दें, समुन्दर में डुबो दें, वह थोडी देर में साँस लेकर फिर चल देगा। इन बातों का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

डॉ. कौशिक: तुम क्यों नहीं मानना चाहते कि मेरे हाथ वह नुस्खा आ गया है जिससे मरा हुआ जीव जी उठे। (डॉ. कौशिकखुश होकर कुर्सी से उठत है) हा,हा, हा, अब में जितना चाहूँ यह सल्यूशन बनाकर निर्जीव प्राणियों को नया जीवन दे सकता हूँ।

अविनाश: (संदेह से) पर कौन चाहेगा, आपका यह नुस्खा?

डॉ. कौशिक: तुम पूछते हो कौन? मैं कहता हूँ कौन नहीं चाहेगा! अविनाश। जिसके घर कोई मर जाता है ,वहाँ कैसे टूट जाते हैं लोग, बिखर जाता है नीड। मैं पीडा से कराहती मानवता के लिये नए जीवन का संदेश लाऊँगा।

अविनाश (सिनिकली) आप मृत्यु को चुनौती देंगे, जीवन और मृत्यु तो ध्रुव सत्य है।

डॉ. कौशिक: जीवन है लेकिन मृत्यु नहीं यह मैंने अपने इस कम्पाउण्ड से सिद्ध कर दिया है ।

(पास ही अखबार पड़ा हैडॉ. कौशिकपन्ने पलटते हैं और चौथा पृष्ठ खोलकर अविनाश के आगे रख देते है।)

डॉ. कौशिक: यह देखो, रोज कितने हैंजिनका घर कोई – न –कोई मर जाता है,कोई बीमारी से , कोई दुर्घटना से, कोई यों ही। कितने लोगों को ये रोते– बिलखते छोड़ जाते हैं। इनके घर वालों द्वारा दिए शोक – समाचार पढ कलेजा मुँह को आता है, मै इन सबके दुःख दूर करूँगा।

(अविनाश के चहरे पर मन्द, व्यंग्यपूर्ण मुस्कान है। डॉ. कौशिक अपनी बात खत्म कर मुड़ते हैं तो वह उनकी पीठ पीछे कन्धे उचका देता है।)

(अगला दिन। घड़ी सुबह के नौ बजा रही है। डॉ. कौशिकके हाथ में अखबार है। चौथे पृष्ठ पर कई जगह वे निशान लगाते हैं। इन जगहों पर कोई – न – कोई मर गया है जिसके परिवार ने अखबार में शोक – समाचार प्रकाशित किया है। डॉ. कौशिक दवाओं का ब्रीफकेस स्कूटर में रखते हैं। इस बीच अविनाश भी आ जाता है।)

डॉ. कौशिक: तो चलें?

अविनाश : (बुझे स्वर में) चलिए, लेकिन ...

डॉ. कौशिक: आज सुहानी सुबह है और हम एक महान काम पर निकल रहे हैं, अविनाश। अपना यह लेकिन – वेकिन, यहीं घर पर में छोड़ चलो।

(दोनों स्कूटर पर जाते हैं, दो– चार मोड़ घूमने के बाद वे जिस कालोनी में आते हैं उसके साइन बोर्ड पर लिखा है 'भावना नगर'। एक लम्बी सडक के अन्तिम छोर पर वे एक ऐसे मकान पर रूकते हैं जहाँ काफी भीड़ लगी है। सभी के चेहरे शोकमग्न हैं। लोग मृतक के गुणों का बखान करते हुए उसकी मृत्यु पर अफसोस प्रकट कर रहें हैं। कमरे के अन्दर का दृश्य।)

पहला बेटा : हाय जब तक पिताजी थे, मुझे घर की कोई फिक्र नहीं थी। महीने में बीस – बीस दिन मैं दौरे पर रहता था, उन्ही के भरोसे।

दूसरा बेटा : पिताजी तो महापुरुष थे। मैं इतना बडा हो गया, फिर भी मुझे बच्चा मानते। अभी पिछले साल यह घड़ी उन्होंने मेरी साल गिरह पर दी थी।

एक बहू : हाय मैंने इन्हें पिता जी से बढ़कर समझा। मैं तो इन्हें नाश्ते में दो अण्डे देती थी।

दूसरी बहू : हाय ये मनुष्य नहीं देवता थे। इनके बिना हम कैसे जियेंगे ?

(डॉ. कौशिक मृतक के बेटों को एक तरफ ले जाकर बड़ी उमंग से अपनी खोज के बारे में बताते हैं।)

डॉ. कौशिक: यकीन मानिए, मैंने ऐसा फार्मुला ढूँढ़ निकाला है कि मैं आपके पूज्य पिताजी को जीवित कर सकता हूँ।

(दोनों बेटे एक हका – बका अन्दाज में एक– दूसरे को ताकते खडे हो जाते हैं। कभी वे डॉ. कौशिकको देखते हैं, कभी एक– दूसरे को तभी उनकी पत्नियाँ भी आ जाती हैं।)

दोंनों पत्नियाँ एक साथ : क्यों जी ऐसे क्यों खडे हो सारा काम पडा है!

दोनों बेटे : ये कहते हैं ...

पत्नियाँ : (सशंकित) क्या कहते हैं ?

डॉ. कौशिक: मुझसे आप लोगों का दुःख देखा नहीं जा रहा। आज सुबह ही अखबार में मैंने यह शोक समाचार पढ़ा जो आपने दिया था। हाल ही में मैंने एक ऐसा फार्मुला ढूँढ़ निकाला है जिससे पिताजी को नई ज़िन्दगी मिल सकती है।

एक पत्नी : ना बाबा, जाने क्या कीमत माँग बैठे आप!

डॉ. कौशिक: इसके बदले, मैं आपसे कौड़ी भी न लूँगा । इसकी कामयाबी ही इसकी किमत है।

पहला बेटा : (कुछ दबे स्वर में अपने भाई से) पिताजी का

वसीयत नामा देख लिया। कोई कसर तो नही है उसमें ?

दूसरा बेटा : (सन्तुष्ट आवाज) वह मैंने पहले ही देख लिया है, वसीयत नामा दुरूस्त है।

पहला बेटा : लेन– देन निपटा गये है?

दूसरा बेटा : (तसल्ली से) सब निपटा गये हैं।

पहला बेटा : फिर क्या ...

(दोंनों लडके डॉ. कौशिककी तरफ मुखातिब होतें हैं। उनकी पत्नियाँ उग्र विरोध से डॉ. कौशिकको देख रही हैं।)

पहला बेटा : ऐसा है डाक्टर साहब, आप की बात मान कर हमें बड़ा हर्ष होता लेकिन आप जानते हैं, बड़ा नाजूक मामला है। दोनों छोटे भाई विदेश में हैं, उन्हें केबिल किया हुआ है। वे आकर कितना बिगड़ेंगे? उनके हजारों डालर मि–ी में मिल जायेंगें।

दूसरा बेटा: (बनावटी लहजा) आप भी साहब अजीब हैं। इधर हमें सारा इन्तजाम करना है, देर हो रही है, उधर आप एक नया शगूफा लेकर आ गये हैं।

(तभी सोलह साल एक लड़का बाहर से आकर उत्तेजित आवाज में कहता है।)

छोटू : पापा गेंदे के फूल ले आया हूँ। फूल वाले को दो सौ रूपये दे दीजिए।

(ट्रक आकर घर के सामने खड़ी होती है। उसमें से घर का एक सदस्य अन्दर आता है)

किशन : सुरेश, बड़ी मुश्किल से ट्रक का इन्तज़ाम किया है। इस काम के लिए कोई गाड़ी देता ही न था। सारी ट्रकें आजकल छात्रों ने चुनाव में रोक रखी हैं। बड़ी मेहनत के बाद यह ग्यारह सौ पर मिली है। आधा पैसा एडवांस दिया, तब कहीं आयी है ट्रक ।

एक अन्य आदमी : (बाहर से आकर) आपने आज अखबार में किराए पर कमरा देने का जो इश्तेहार दिये थे, उसी सिलसिले में आया हूँ।

(दोंनों भाई डॉ. कौशिक की ओर और फिर समस्त इन्तज़ाम की ओर एक उलझन भरी नजर डालते हैं। 'क्या करें' जैसे भंगिमा बनाकर सिर पर हाथ रख लेते हैं। तभी कुछ और मेहमान अन्दर घुसते हैं और एक बार फिर 'हाय पिताजी', 'हाय पिताजी', विलाप शुरू हो जाता है। बड़ा लड़का हाथ जोड़कर डॉ. कौशिकको स्कूटर तक पहुँचा आता है)

बड़ा बेटा : जो हम पर पड़ी है, भुगत लेंगे डाक्टर साहब। आप क्यों पड़े इस चक र में ? नमस्ते।

(लडका तेजी से वापस कमरे में चला जाता है। डॉ. कौशिकअबूझ से उसी दिशा में देखते रहते हैं। अविनाश उनके कन्धे पर ऐसे स्पर्श करता है जैसे दरवाजा खटखटा रहा हो।)

अविनाश : अब कहाँ जाना है, बताइए, देर हो रही है।

(डॉ. कौशिकअखबार देखकर कहते हैं 'आस्तानगर' । अविनाश स्कूटर स्टार्ट करता है। काफी दूर चलने के बाद, मकानों के नम्बर पढते– पढते सही पते पर पहुँचते हैं। मकान के अन्धर बाहर सफेद कपड़ों में बहुत से स्त्री– पुरुष नजर आते हैं। बरामदे में मृत औरत का शव ले जाये जाने की तैयारी है। घर की बहू अपनी बाँह पर तीन– चार भारी,जरी की साड़ियाँ लिए खड़ी है और बड़ी–बूढ़ियों में सलाहचल रही है, कौन – सी साड़ी मृतका पर चढ़ाई जाए? अन्त में सब की सलाह पर एक हल्की पुरानी जरीदार साड़ी से शव ढाँप दिया जाता है।)

(शव के पैरों के पास ही एक नवयुवक गमगीन बैठा है। डा. कौशिक फुर्ती से ब्रीफकेस खोलकर एक शीशी उस नवयुवक को दिखाते हैं और हाव भाव से बताते है कि वे क्या कर सकते हैं? नवयुवक के चेहरे पर आह्लाद, उत्तेजना और अविश्वास के चिह्न आते हैं। वह तुरन्त पत्नी को आवाज देता है, गिरिजा, गिरिजा सुनो तो।

(गिरिजा के हाथ पर अभी भी साड़ियाँ लटकी हैं। आकर वह प्रश्नवाचक निगाह से दोनों को देखती है।)

(नवयुवक उसे जल्दी– जल्दी उसे समझाता है।)

नवयुवक : अम्मा फिर से जी सकती है, ये डाक्टर साहब का कहना है, इनके पास ऐसी दवाई ...

(गिरिजा सीधे डॉ. कौशिकको कुछ ऐसी आक्रमकता से देखती है

कि वे दो कदम पीछे हट जातें हैं। फिर गिरिजा एक गहरी चिढ़ से अपने पति की ओर देखती है वह सहम कर वहाँ से हट जाता है। गिरिजा के होंठ निर्णायक वक्रता ले लेते हैं। अब वह बोलती है, एक ठंडी, निश्चयात्मक आवाज जिसमें आँसू का कोई गीलापन नहीं है।)

गिरिजा : (कटखनेपन से) क्या आपको पता है माँजी किस जानलेवा बीमारी से तड़प– तड़पकर गुजरी है! आज पाँच साल बाद वह पहली बार चैन से सो रही हैं। नहीं तो इन सालों में सारी– सारी रात खाँस–खाँस कर इन्होंने अपना और मेरा जीना हराम कर रखा। इतने साल सोते– जागते, आठों पहर इनकी सेवा आखिर किसने की? मैंने! इस बीच घर के सब लोग किसी– न–किसी बहाने भागते रहे, कभी दफ्तर, कभी कालेज, कभी बाजार। एक मैं ही थी जो इस पिछवाड़े के कमरे में घुटी रही तीमारदारी के लिए। बाकी बहुएँ तो अभी आयेंगी, एकाध घंटे हाय– हाय करेंगी और उनके बक्से टटोलने लग जायेंगी। मै ही हूँ। माँ जी को आप जीवन देने आये हैं या मुझे मौत!

(नवयुवक एक क्षण बड़ी हताशा से अपनी पत्नी की ओर देखता है, फिर डॉ. कौशिक को ठेलता हुआ–सा बाहर ले जाता है। स्कूटर के पास अविनाश खडा हुआ है शक्ल से ही डॉ. कौशिककी निराशा समझ जाता है।)

नवयुवक : जाने दीजिए डा.साहब। मेरी बीबी बड़ी लड़ाकु है, इससे नहीं भिड़ें; तभी अच्छा है।

(नवयुवक अन्दर चला जाता है।)

(डॉ. कौशिकपस्ती से अपना ब्रीफकेस स्कूटर की टोकरी में डालते है! अविनाश तसल्ली देने के लिए डाक्टर का कंधा थपथपाता है।)

अविनाश : आपने तीसरा निशान लगाया है मुहब्बतनगर पर। यह बी. 29 में चलते हैं ।

(स्कूटर चल देता है। कई मोड़ मुड़कर साईन बोर्ड दिखाता है। 'मुहब्बतनगर' स्कूटर बी–29 के आगे खड़ा होता है। फ्लैट के बाहर बड़ा मनहूस– सा सन्नाटा है। तीन–चार लोग एक जीप को चारों ओर सफेद कपडे से ढँक रहे हैं। हिम्मत कर डॉ. कौशिकमकान के अन्दर दाखिल होते है। कमरें में सफेद वस्त्रों में पन्द्रह–बीस स्त्रियाँ बैठी हैं। उनके बीच एक नवयुवती एकदम काले वस्त्रों में सिर झुकाए सिसक रही है। उसने आँखों पर आँचल रखा हुआ है । कमरे की दीवार पर मृतक की फोटो लटकी हैजिस पर फूलों का हार चढाया हुआ है । दय–विद्रावक दृश्य।)

डॉ. कौशिक: मैं कैप्टन शर्मा की विधवा से बात करना चाहता हूँ ।

(नवयुवती होश करती है। धीरे–धीरे भीड़से उठकर डा. कौशिक की तरफ आती है। बहुत रो लेने के बाद उसकी आँखें बड़ी उदास और भीगी लग रही हैं।)

डॉ. कौशिक: मैंने आज सुबह अखबार में आप के द्वारा दिया शोक समाचार पढ़ा तो मै हिल उठा। मै आपके लिए जीवन का नया संदेश लाया हूँ। आप इस खुशखबरी को पाकर झूम उठेंगी।

(नवयुवती प्रश्नवाचक दृष्टि से डॉ. कौशिकको देखती है। एक जिज्ञासु औरत अगरबत्तियाँ जलाने के बहाने उन दोनों की तरफ आ गई है। नवयुवती उसकी ओर सतर्कता से देखती है।)

नवयुवती : कमला जाओ साहब के लिए पानी लाओ।

डॉ. कौशिक: धन्यवाद क्या आप दोनों में बेहद प्रेम था ?

नवयुवती : (आँखें मूँदकर) बेहद! अगर उन्हे कही बाहर जाना पडता था तो मिनट–मिनट पर फोन कर मेरा हाल पूछते थे। और तो और मुझे गुसलखाने में भी देर लग जाये तो वे गवारा नहीं करते थे।

डॉ. कौशिक: कैसे हुआ यह सर्वनाश !

नवयुवती : एयरक्रैश!

डॉ. कौशिक: ओफ!

(एक क्षण सन्नाटा ! फिर अपनी आवाज में सायास उत्साह भर डा.कौशिक कहते हैं।)

डॉ. कौशिक: लेकिन अब आपको अपना जीवन अकेले नहीं गुजारना पडेगा । मैं आपके पति को फिर से जीवन दे सकता हूँ इसीलिए आया हूँ ।

(नवयुवती का चेहरा कुछ विकृत हो जाता है । सख्त आकृति }

नवयुवती : किस तरह ?

डॉ. कौशिक: मैंने एक ऐसा मिक्स्चर तैयार किया है जिससे मरा हुआ इन्सान जी सकता है।

नवयुवति : (कठिन स्वर से) और मैं समझे बैठी थी कि आप बीमा क्म्पनी से आये हैं। चले जाइये यहाँ से ! आप सोचते हैं मैं आप धूर्त लोगों से,अपने शेखर की पवित्र काया दूषित करवाऊँगी !

(नवयुवती की तीखी आवाज और तमतमाया चेहेरे से सहम कर डा.कौशिक बाहर को भागता है। हड्बडी में ब्रीफ्केस भूलने लगता है, उसे लेने मुडता है। नवयुवती फिर घुडकती है, 'गए नहीं आप ?)

डॉ. कौशिक: जाता हूँ। जाता हूँ।

(बाहर आकर डॉ. कौशिकमाथे से पसीना पोंछते हैं। अविनाश हमदर्दी से उसकी ओर देखता है।)

अविनाश : छोडिए डा. ! आप भी किन तिलों में तेल तलाश रहे हैं। पैसे से बडा महबूब नहीं।

डॉ. कौशिक: जिन्दगी जिन्दाबाद। एक पता बाकी है, चलेंगे। क्या पता वहाँ कोई हो जिसे सचमुच कोई जान से प्यारा हो।

स्कूटर चल पडता है। जल्द ही एक साईनबोर्ड दिखता है। "इबादत नगर" । बस्ती मे एक मकान के बरामदे मे छोटी सी भीड। बडी कमसीन नववधू मर गयी है।

उसका पति अपने सीने पर हाथ मार– मार कर विलाप कर रहा है।

पति: "हाय कम्मो तू कहाँ चली गई ? तुझे क्या हो गया कम्मो ?"

(कई बुजुर्ग और हम उम्र लोग उसे दिलासा दे रहे हैं।)

(मृत बहू की सास रोती है । 'सास हाय मेरी सोने सी बहू कहाँ चली गई?')

(डॉ. कौशिकसहानुभूति से युवा विधुर के कन्धे पर हाथ रखकर उसे अन्दर कमरे में आने का इशारा करते है ।)

डॉ. कौशिक: आपका दुःख वाकई बहुत बडा है । मैं आपकी पत्नी को नया जीवन देने आया हूँ ।

(प्रस्ताव सुनते – सुनते कम्मो के पति की भंगिमा बदलती जा रही है । उसके चहरे पर आश्चर्य, चिढ और अविश्वास के भाव बडी तेजी से आ रहे हैं । अन्त मे वह बडी दार्शनिक आकृति बना लेता है।)

पति : डा. साहब आप किस कम्मो को लौटाने की बात कर रहे हैं? वह हाड– माँस की काया? वह तो मि–ी है मि–ी । अगर कम्मो जजबात का नाम है जो मेरे रग– रग में समाया है तो वह कहाँ है डाक्टर साहब, देखिए वह यहाँ है वहाँ है, घर के कोने– कोने में है!

'इक तेरी दीद छिन गई मुझसे

वरना दुनिया में क्या नहीं बाकी !'

(कहते – कहते कम्मो का पति पास पडे अखबार से अपना मुँह ढाँप लेता है । अखबार में विज्ञापनों वाला पृष्ठ ऊपर है । वैवाहिक विज्ञापनों वाले पन्ने पर कम्मो के पति ने जगह – जगह लाल निशान लगा रखे हैं । डॉ. कौशिकध्यान से उन निशानों को देखते हैं और धीरे से बाहर को चलदेते हैं । बाहर अविनाश खडा है । वे दोनों एक – दूसरे को देखते हैं । डा. कौशिक उसका कंधा दबाते हैं ।)

डॉ. कौशिक: तुम ठीक कहते थे, मैं ही गलत था ।

अविनाश : मौत जालिम है, मगर जिन्दगी के कायदे उससे भी ज्यादा जालिम है !

(स्कूटर पर सवार दोनों व्यक्तियों का चित्र धीरे – धीरे धुँधला पडता जाता है ।)

लेखक का परिचय

हरिशंकर परसाई का जन्म मध्य प्रदेश के इटारसी के पास जमानी नामक स्थान पर 22 अगस्त, 1924 ई. को हुआ। नागपुर विश्वविद्यालय से इन्होंने हिन्दी में एम.ए. किया। कुछ वर्षों तक इन्होंने अध्ययन कार्य किया किन्तु लेखन के प्रति विशेष लगाव के कारण अध्यापन कार्य को छोड़कर पूर्णतया साहित्य सेवा में संलग्न हो गये। जबलपुर से इन्होंने 'वसुधा' नामक साहित्यिक पत्रिका का संपादन और प्रकाशन शुरू किया, कुछ वर्षों बाद आर्थिक कारणों से यह पत्रिका बन्द हो गयी। इनकी बहुमुखी प्रतिभा निबंध तथा काव्य सृजन में दिखाई देती है। इनकी प्रमुख रचनाएँ–

निबंध संग्रह: 'तब बात और थी' , 'भूत के पाँव पीछे की ओर', 'बेईमानी की परत', 'पगडंडियों का जमाना', 'सदाचार का तीवीज़', 'शिकायत मुझे भी है'।

उपन्यास: 'रानी केतकी की कहानी', 'तट की खोज'।

कहानी संग्रह: 'हँसते हैं, रोते हैं', 'जैसे उनके दिन फिरे'।

परसाई स्वतंत्र निबंध लेखक हैं, उनकी स्वतंत्र लेखनी उनके अनुभवों की उपज है। जीवन को देखने की उनकी अपनी दृष्टि है। उन्हें जो भी बनावटी और अनुचित दिखता है वे उस बनावटीपन पर जमकर प्रहार करते हैं।

परसाई जी अपनी रचनाओं में व्यक्ति और समाज की दुर्बलताओं पर गहरी चोट करते हैं। इनका व्यंग्य व्यक्तिगत राग–द्वेष

या सस्ते मनोरंजन तक सीमित नहीं रहता। परसाई जी का तीक्ष्ण व्यंग्य समाज में फैली विसंगतियों तथा विकृतियों से रू–ब–रू कराता है। आवश्यकतानुसार हास्य–विनोद तथा प्रतीक आदि का सही प्रयोग कर कथ्य को चुटीला और मार्मिक बनाने की कला में परसाई जी सिद्धहस्त हैं। विसंगतियों के साथ ये कहीं भी समझौता नहीं करते। आम आदमी की दुर्दशा, उसके जिम्मेदार राजनीति, पुलिस का आतंक व सामाजिक–आर्थिक विषमताओं पर परसाई जी तीखा प्रहार करते हैं। इनका समूचा लेखन सोद्देश्य है और मनुष्य को सतर्क करने का प्रयास है। परसाई के व्यंग्य स्थितियों से छेड़छाड़ नहीं करते, स्थितियों की समीक्षा करते हैं।

परसाई जी के व्यंग्यों में वार्तालाप शैली का प्रयोग मिलता है। रचनाओं में ये ऐसे उपमानों का प्रयोग करते हैं, जिससे व्यंग्य की शक्ति कई गुना बढ़ जाती है। इनकी दृष्टि में व्यंग्य–लेखन निर्मम तथा मनुष्य–विरोधी हो कर नहीं जी सकता वरन् वह जीवन की कमजोरियों का निदान प्रस्तुत करने के लिए ही कठोर रुख अपनाता है। परसाई के व्यंग्य को पढ़कर जो तिलमिलाहट होती है, वह हमें समस्त संस्कृति व सभ्यता के बारे में सोचने के लिए बाध्य कर देती है। इनका व्यंग्य मनोरंजन से अधिक पाठकों के मन पर दुख की अमिट छाप छोड़ जाता है। इनका व्यंग्य आज की भारतीय मानसिकता का पर्याय है। इनके कथन में विविधता है तो शिल्पगत रचाव भी। इनके व्यंग्यों की विचार–भूमि प्रामाणिक और व्यापक है। बौद्धिक और मानसिक दृष्टि से इनमें एक प्रौढ़ता है। इन्हें भाषा की सही पहचान है। शब्दों का भावोचित विन्यास कथ्य को पाठकों के

मानस में सीधे उतार देता है। व्यंग्य में नये शब्द गढ़ना हरिशंकर परसाई की भाषा का वैशिष्ट्य है। लाक्षणिकता भाषा के स्वरूप को निखारती जान पड़ती है।

कर कमल हो गये

पिछले महीने से अपने हाथ भी कमल हो गये हैं। मेरे पास तीन कालेजों के समारोहों के निमन्त्रण–पत्र रखे हैं, जिनमें श्रीमान या श्रीमतीजी से कहा गया है कि उद्‌घाटन इस अकिंचन के करकमलों से होगा। यह मैं कर भी आया। चरण कमलों से मंच पर चढ़ा, कमल नयनों से लोगों को देखा, कर कमल से फीता काटा और मुख कमल से भाषण दे डाला। उन लोगों ने सिर्फ हाथों को कमल कहा था, मैंने शरीर–भर को कमल बना लिया। ऐसा देवताओं का होता था। राम के तो नाखून तक कमल के थे। देवताओं का एक काम तो मैं भी करता हूँ। आकाशवाणी करता हूँ। रेडियों से बोलता हूँ और रेडियो का हिन्दी नाम आकाशवाणी है। यों मैं विनोबा भावे से ज्यादा गाँधीजी के रास्ते पर चलता हूँ। जिसे रास्ते से रोज निकलता हूँ, उसका नाम ही महात्मा गाँधी मार्ग है। नाम से आदमी तर जाता है। उल्टे नाम तक से तर जाता है। कोई 'मरा–मरा' चिल्ला रहा था तो राम ने उसे सीधा स्वर्ग भेज दिया। बड़े आदमी छोटा अहसान करके 'प्रोपेगेण्डा स्टण्ट' साधते हैं। वैष्णव इस स्टण्ट को समझे ही नहीं और स्तुति गाने लगे।

मेरे एक दोस्त के कर भी कमल हो गये हैं। मुझसे कुछ बेहतर क्वालिटी के, क्योंकि वे पाँच उद्‌घाटन इस मौसम में कर चुके हैं। वे मेरे हाथ उलट–पलटकर देखते हैं, और मैं उनके देखता हूँ। और वे कहते है, "यार, दोनों के हाथ एकाएक कमल कैसे हो गये? यह क्या बात है?"

सचमुच यह बात क्या है? मैंने भरसक कोशिश की है कि हाथ कमल न हो जाएँ। हथेली पर मैंने काँटे बोये हैं। मगर न जाने क्या हुआ कि कर एकाएक कमल हो गये। अब मैं परेशान हूँ। जिनके हाथ मुझसे पहले कमल हो गये थे, उनकी दुर्दशा मैं देख रहा हूँ। वे कर कमलों से उद्घाटन करने जाते हैं, और मुख कमल खोलते हैं, तो माइक की तबीयत चाँटा जड़ देने की होती है। अभी वह जब्त किये हैं, पर एक वस्क्त एसा आएगा जब माइक मुख कमल में घुसकर टेटरी बन्द कर देता। पर कमलवाले मुँह खोलते हैं कि लड़के चिल्लाते हैं, 'भाषण नहीं नौकरी दो!' वे सँभलकर कहते हैं, 'यह देश तुम युवकों का है।' लड़के चिल्लाते हैं, 'बकवास बन्द करो।' वे कहते हैं, "इस देश का तुम्हें निर्माण कारना है।" लडके कहते हैं, "चुप रह बे!" वे कहते है 'हमें तुमसे बड़ी–बड़ी आशाएँ हैं। लड़के चिल्लाते हैं, 'शटप!' फिर घेराव, नारे, जूता फेंका और कभी पिटाई भी।

ये कमल अब कालेजों में जाने में डरने लगे हैं। उद्घाटन करनेवालों का टोटा पड़ने लगा था। जूता मारने का कमल तो चाहिए ही। अब मुझ जैसे लोगों के कर कमल बना दिये गये हैं सार्वजनिक जिन्दगी में एक ऐसा वक्त आता है जब आदमी कमल हो जाता है। फिर ऐसा वक्त आता है जब कमल पर जूते पड़ते हैं।

अखबार में यह जिनका चित्र है, उनके हाथ पिछले पन्द्रह सालों से कमल हैं।

सैकड़ों निमन्त्रण–पत्र इसके प्रमाण हैं। कल ही एक

विश्वविद्यालय में अच्छी–अच्छी बातें कहते हुए वे पिट गये। आजकल देख रहा हूँ कि अच्छी बातें कहनेवाले ज्यादा पिट रहे हैं। अब अच्छी बातें कहने का हक किसी को लोग देना नहीं चाहते। जिस देश में अच्छी बातें कहने से आदमी पिट जाए, उसमें अच्छी बात कहनेवालों ने क्या गजब न किया होगा?

कल मुखकमल से अच्छी बातें कहते हुए जो पिट गये थे, वे इस चित्र में मुस्कराते हुए पालम हवाई अड्डे पर विदेशी अतिथि का स्वागत कर रहे हैं। विदेशी राज–अतिथि की मुसकान इतनी अच्छी है कि लगता है, वे भी अपने देश में पिटकर हवाई जहाज में बैठे होंगे। बिना पिटे ऐसी अच्छी मुसकान नहीं आ सकती, यह हमारा पिटकर मुसकानेवाला बात रहा है। इस देश में यह बड़ी अजब बात है कि जो जितना पिटता है, वह उतना ही अच्छा मुस्कराता है।

विदेशी राज–अतिथि से अपना यह कमलवाला क्या कह रहा है। वह जो कहता है अखबारों में नहीं छपता। वह कहता है– 'साहब, हमारी शर्म अब20–22 साल की जवान लड़की हो गयी है। जब आप आते हैं तो आपकी मुसकान की रेशमी साड़ी अपनी नंगी शर्म को पहनाकर आपके सामने पेश करते हैं। आप इससे शादी कर लीजिए, यह पूर्ण शीलवती है। हमने हर चीज का शील भंग हो जाने दिया है, पर शर्म के शील की रक्षा की है!'

इसके बाद वह अपने कर कमलों से दो दर्शनी हुण्डियाँ निकालेगा–एक चीन की और दूसरी पाकिस्तन की और फौरन भुगतान करा लेगा। फिर वह किसी जादू से चीन और पाकिस्तान को

बच्चों को डराने के 'बाबा' बना लेगा। बच्चे भूख के कारण रोएँगे, तो कहेगा–'चुप, सो जा। बाबा आ रहे हैं। चीन और पाकिस्तान पकडकर ले जाएँगे।' बच्चे डर से भूख को मारकर सो जाएँगे।

विदेशी फिर कहेगा–'आपके देश की महान संस्कृति है।' अपना कमल कहेगा, 'संस्कृति की हड्डी को अब कुत्ते चबाते घूम रहे हैं। संस्कृति की हड्डी कुत्ते को जबड़ा फोड़कर उसके खून को उसी के स्वाद से चटवा रही है। हाँ, हम विश्वबन्धुत्व भी मानते हैं, यानी अपने भाई के सिवा बाकी दुनिया–भर को भाई मानते हैं।'

ये कमल अब पुलिस की सुरक्षा में मिलते हैं। यह नयी किस्म का कमल इस देश में पैदा हुआ है, जो तभी खिलता है, जब आसपास पुलिस हो। वनस्पतिशास्त्रियों को इसका अध्ययन करना चाहिए। नृतत्त्वशास्त्रियों के काम का यह नहीं है, क्योंकि यह आदमी नहीं, कमल है। कमल सूर्य को देखकर खिलता है, सूर्यास्त पर बन्द हो जाता है। यह नया कमल पुलिस देखकर खिलता है, पुलिस न दिखे तो मुरझा जाता है। बड़ा सुन्दर दश्य होता है–आगे पुलिस,पीछे पुलिस, बाये पुलिस, दाये पुलिस और बीच में यह कमल मुसकराता चला जाता है। एक सूखा सरोवर है, जिसमें खाकी लहरें उठ रही हैं। खाकी लहरों के बीच यह कमल खिलता है।

जब लोग करों को कमल बनाने पर तुले ही हैं तो अपने बारे में चिन्ता हो गयी है। कैसे यह रोल निभेगा? एक तो मैं हरगिज अच्छी बातें नहीं कहूँगा। इस देश का आदमी लगातार अच्छी बातों

से मारा गया है। बहुत लोगों का खयाल है कि जवाहरलाल शेरवानी में गुलाब का फूल न खोंसकर भटकटैया खोंसते तो ज्यादा अच्छा होता। लगातार अच्छी बातों से मारा, सुन्दर फूल से मारा। मैं अगर अपने मुख कमल से कोरी अच्छी बातें करूँ तो सामने बैठे लोग मुझे फौरन जूता मार दें। मगर बहुतों के पैरों में जूते नहीं हैं, ये क्या मारेंगे? संविधान में जूते मारने का बुनियादी अधिकार तो होना ही चाहिए। आदमी के पेट में अन्न न हो, शरीर पर कपड़े न हों, पर पाँवों में जूता जरूर होना चाहिए, जिससे वह जब चाहे बुनियादी अधिकार का उपयोग कर सके।

मैं कोई अच्छी बात नहीं कहता। मैं तो 'उद्घाटन' को भी बुरा शब्द मानता हूँ। साहित्य में जो अपने को विद्रोही पीढ़ी कहती है उसके एक संकलन का उद्घाटन करने के लिए मुझे बुला लिया गया था। मैंने देखा, वैसा ही सुनहला निमन्त्रण–पत्र–उसमें वही 'उपस्थिति में शोभा' बढाने की बात, पुस्तक पर रंगीन कागज और उस पर बँधा वही रेशमी पीला फीता। इसमें विद्रोही पीढीपन कहाँ है? मैंने माइक हाथ में लेते ही कहा–'विद्रोही पीढ़ी का उद्घाटन समारोह नहीं, 'विस्फोटन' समारोह होना चाहिए। निमन्त्रण–पत्र पर होना चाहिए–हमारे काव्य–संकलन का विस्फाटन अमुक वक्त पर होगा। तुम्हें आना हो तो आओ वरना ऐसी–तैसी कराओ' यह बात तरुणों को अच्छी लगी। बात अच्छी नहीं है न!

सफल कमल होने की मैं पूरी कोशिश करूँगा। सार हथकडे सीखूँगा। गुरुओं की कमी नहीं है। एक गुरु को मैंने पिछले साल पा लिया। वे मेरे शहर में एक समारोह का उद्घाटन कर रहे थे।

बहुत भाव–विभोर होकर बोले–'अहा, जबलपुर! पुण्यभूमि है। यहाँ की मि– में इतिहास बिखरा पड़ा है। यहाँ की धूल चन्दन है। मैं उसे मस्तक से लगाता हूँ।' उन्होंने जेब से धूल की पुड़िया निकाली और कपाल पर लगा ली। साहब पूरा हॉल मुग्ध हो गया और उन्होंने घण्टे–भर भाषण खींच दिया।

मैं उनके पीछे लग गया । सागर में एक समारोह का उद्घाटन करते हुए उन्होंने फिर कहा–'अहा, सागर! यह पुण्यभूमि है। यहाँ की मि–ी में इतिहास बिखरा पड़ा है। यहाँ की धूल चन्दन है। मैं इसे मस्तक से लगाता हूँ।' उन्होंने फिर जेब से पुड़िया निकाली और कपाल पर धूल लगा ली। सागरवाले भी मुग्ध होकर उन्हें सुनते रहे।

फिर वे बरेली पहुँचे। वहाँ वे बोले, 'अहा, बरेली। यह पुण्यभूमि है। यहाँ की मि–ी में इतिहास बिखरा पड़ा है। यहाँ की धूल चन्दन है। मैं इसे मस्तक पर लगाता हूँ।' पुड़िया निकालकर फिर उन्होंने धूल लगा ली। वे घर से धूल की पुड़िया जेब में डालकर चलते हैं।

यह गुरु अच्छा है। मगर यह गुरु के नगर में फेल हो जाता है। शिवकुमार बताता है कि मैं उन्हीं गुरु के शहर गया हुआ था समारोह की अध्यक्षता वही कर रहे थे। मैंने भावुकता से कहा–'अहा, यह नगरी पुण्यभूमि है। इसकी मि–ी में इतिहास बिखरा पड़ा है–लोग हँसने लगे। मैं पुड़िया निकालकर कपाल पर धूल लगा ही नहीं सका।

तरकीबें कई हैं। एक तरकीब हर मौके पर काम नहीं करती। तरकीबें मुझे भी बहुत आती हैं पर मेरे मित्र फिर कहते हैं–'अपने हाथ एकाएक कमल कैसे हो गये? आखिर यह क्या हो गया?'

वे ही सोचकर जवाब देते हैं–'हमलोग बुद्धिजीवी हैं। बुद्धिजीवी का रुतबा बढ़ रहा है।'

हाँ, बढ़ तो रहा है। इस देश के बुद्धिजीवी सब शेर हैं। पर वे सियारों की बारात में बैण्ड बजाते हैं।

प्रेमानन्द चन्दोला

प्रेमानन्द चन्दोला का जन्म रावत गाँव (प्रौढ़ी–गढ़वाल) में हुआ। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से प्राणिशास्त्र में एम.एस.सी. की डिग्री हासिल की। रेडियोवार्ताकार भी हैं, नाटक, कहानी व ललित लेखन की दिशा में प्रयत्नशील हैं। इन्होंने विज्ञान पर लिखी पुस्तक पर 1981 में पुरस्कार प्राप्त किया।

रचनाएँ: 'कृषि कीट विज्ञन परिचय', 'चीखती टपटप और खामोश आहट', 'बैक्टीरिया अदालत में', 'अनोखे जानवर', 'पंखों पर आसमान'।

प्रस्तुत लेख में रेशम कीड़ों की संघटन–शक्ति और उनके थूक से मनमोहक रेशमी कपड़े तैयार करने की अपूर्व कुशलता का विवरण लेखक हमें देता है।

यह लेख 'कीट कितने रंगीले, कितने निराले' संग्रह से लिया गया है।

कीड़े का लार : कपड़े का तार

रेयॉन, नायलॉन, ड्रेलॉन, टेरिलीन, शिफॉन आदि कृत्रिम या संश्लिष्ट वस्त्रों को पहनने की कितनी होड़ लगी है आजकल! लेकिन कुछ भी हो, रेशम फिर भी रेशम ही है। रेशम की बात और रेशों में कहाँ। अति प्राचीन होते हुए भी अति अर्वाचीन। रेशम शब्द का उच्चारन करते ही सौभ्यता व मृदुलता वाले इस रेशे की अनुभूति एकदम इंद्रियों के सामने उजागर हो जाती है।

रेशम, संस्कृत में कौशेय (कोया या कोश से व्युत्पन्न) तथा अंग्रेजी में 'सिल्क' कहलाता है और सिल्क शब्द तो अब आम बोलचाल की भाषा में भी प्रचलित हो गया है, बल्कि कुछ लोग तो गलत उच्चारण द्वारा इसे 'सिलक' भी कहते हैं। हिन्दी भाषा में रेशम शब्द फारसी से आया और फारसी के रेशम व रेशः (रेशा) शब्दों में व्युत्पत्ति स्म्बन्धी निकटता तो काफी दिखाई देती है, भले ही हो या न हो।

रेशम क्या है? एक छोटे–से कीड़े का थूक या लार। उस क्षुद्र कीट को कितना गौरव होगा जिसके थूक के ताने–बाने को जैविक विकास द्वारा उत्पन्न सर्वोन्नत प्राणी बड़ी शान व नखरे से पहनता है। रेशम की सरल परिभाषा देना चाहें तो कह सकते हैं कि यह कीट के कोयों अर्थात कीट–शिशुओं द्वारा बुने गये कोशों से प्राप्त बारीक, चमकदार व मजबूत प्रोटीनमय रेशा है जो मानव द्वारा वस्त्र निर्माण में प्रयुक्त होता है। लेकिन यदि तनिक अधिक वैज्ञानिक परिभाषा देना चाहें तो परिभाषा इस प्रकार होगी–रेशम एक

एल्यूमिनाभ प्रोटीनि रेशा है जिसका 75 प्रतिशत भाग मजबूत किन्तु लोचदार अंश फाइब्रोइन का और 25 प्रतिशत भाग जिलोटिनी आवरण–पदार्थ सेरीसिन का बना होता है।

रेशम का इतिहास बहुत पुराना है। यद्यपि कुछ विद्वानों का मत है कि रेशम–कीट को सर्वप्रथम पालने वाला देश भारत ही है किन्तु इस सन्दर्भ मेंयथेष्ट प्रमाण नहीं मिले। यह कीट वन्य अवस्था में नहीं मिलता और हमेशा पाला जाता रहा है। यह कितने बड़े संयोग की बात है कि जो रेशम अधिकांशतया महिलोपयोगी साज–शृंगार के लिए प्रयुक्त होता है। उसकी खोज भी एक महिला ने की। इस महिला का नाम था श्रीमती लोट्ज जो चीन के क्वाँग–टी प्रान्त की सम्राज्ञी थी। इस महिला द्वारा यह खोज 2697 ई.पू. में हुई थी। करीब दो हजार वर्षों तक चीन ने रेशम कीट से रेशम प्राप्त करने की प्रणाली को गुप्त रखा। चीन ने नियम बना दिया था कि रेशम कीट से रेशम प्राप्त करने वाले रहस्य को यदि कोई चीनी किसी विदेशी को बतलाएगा तो उसे मृत्युदण्ड दे दिया जाएगा। इसीलिए इतने अन्तराल तक यह रहस्य रहस्य ही बना रहा। किन्तु रहस्यों की भी एक सीमा होती है और रहस्यों को बूझने के लिए तथा कठिनाइयों से जूझने के लिए माई के लाल तैयार हो ही जाते हैं। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर दो पादरी जासूस बनकर चीन पहुँचे और वहाँ पहुँचने पर उन्होंने रेशम प्राप्त करने की विधि के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की। उसके पश्चात समस्या थी रेशम–कीट के अण्डों को चीन से चोरी–छिपे ले जाने की; और एक दिन उन्होंने इसका समाधान ढूँढ़ ही तो लिया। उन्होंने क्या

किया कि अपनी लाठियों के पोले भाग में रेशम के अण्डे भरे और उनको लेकर चुपचाप चीन से बाहर खिसक आए। यूरोप के कुस्तुन्तुनिया प्रान्त में पहुँचकर उन्होंने रेशम–कीट से रेशम प्राप्त करने के रहस्य उद्‌घाटन किया और इस प्रकार 555 ई. में उस रेशम के बारे में सारे यूरोप में जानकारी फैल गयी जिसको चीन में सोने से तोला जाता रहा और जिसके निर्यात से चीन ने बहुतेरा धन कमाया।

रेशम उद्योग पर चीन का पहले भले ही एकाधिकार था किन्तु बाद में धीरे–धीरे यह उद्योग जापान, भारत, बर्मा, यूरोप, उत्तर कोरिया आदि अन्य देशों में फैला और विकसित हुआ। लेकिन अभी भी चीन और जापान ऐसे देश हैं जहाँ संसार का सबसे अधिक रेशम निर्मित होता है। जापान, चीन, इटली, फ्रांस व स्पेन में इस उद्योग पर काफी गंभीरता से ध्यान दिया गया है और इसी कारण वहाँ यह एक महत्त्वपूर्ण उद्योग है। संसार के रेशम उत्पादन करने वाले देशों में भारतवर्ष का चौथा स्थान है और रेशम–निर्यात से हमारा देश अब काफी विदेशी मुद्रा अर्जित करता है।

रेशम का कीट जीवन की लीक

रेशम, रेशम–कीट के कोये (कोश) से प्राप्त होता है। यह चूँकि एक कोश (खोल) में उपलब्ध होता है, इसीलिए इसे कौशेय कहते हैं। रेशम–कीट को जन्तुविज्ञानीय भाषा में 'बॉम्बिक्स मोसड्र' कहते हैं और इस कीट का व शहतूत की पत्तियों का चोली–दामन का साथ है। शहतूत की पत्तियाँ ही इनका आहार हैं।

रेशम–कीट वस्तुतः एक शलभ है जो लम्बाई में लगभग एक इंच और पंख–विस्तार में लगभग दो इन्च होता है। रंग में यह श्वेत या क्रीम–जैसी सफेदी लिए होता है। कीट स्थूलकाय होता है और कमजोर पंखों के कारण उड़ता बहुत कम है। अण्डे धारण करने के कारण मादा का उदर नर की अपेक्षा अधिक फूला हुआ–सा रहता है।

सिर आकार में छोटा होता है जिसमें दो बड़े–बड़े काले संयुक्त नेत्र और कन्धे की आकृति की दो श्रृंगिकाएँ या सींगियाँ होती हैं। मुखांगों के अक्रिय होने के कारण यह कीट अपने मात्र दो–तीन दिन के जीवन–काल में बिलकुल भोजन नहीं कर पाता, यानी निराहरी रहता है।

वक्ष के निचले तल में तीन जोड़ी बारीक टाँगें और ऊपर पार्श्व में दोनों ओर जुडए हुए दो जोड़ी पंख होते हैं। वैसे तो ये पंख श्वेत होते हैं किन्तु अगले पंख धारीदार होते हैं। उदर आठ या नौ खण्डों में बँटा होता है और शरीर का यही भाग स्थूल होता है। कीट का सम्पूर्ण शरीर रोमों से ढका रहता है।

निषेचन क्रिया मादा के शरीर में सम्पन्न होती है। रेशम–कीट के जीवन–इतिहास में प्रौढ़ अवस्था के अतिरिक्त अण्डा, इल्ली और कौशस्य (प्यूपा) की अवस्थाएँ भीए पाई जाती हैं। मादा रात्रि में अण्डे देना शुरू करती है। एक बार में तीन–चार सौ अण्डे दिए जाते हैं जो समूह में शहतूत की पत्तियों पर चिपका दिए जाते हैं। अण्ड–विस्फोटन की क्रिया में गर्मियों के दिनों में दस–बारह

दिन और जाड़े के दिनों में तीस दिन के करीब लग जाते हैं। कुछ जातियों के अण्डों का फूटना सर्दी के कारण नहीं होने पाता और इस अवस्था को शीतनिष्क्रियता कहते हैं। ऐसी जातियों में एक ही पीढ़ी होती है और इन जातियों को एकप्रज जाति कहते हैं। रेशम–कीट की ऐसी जातियाँ उन्हीं देशों में पाई जाती हैं जहाँ वर्ष में अधिकतर सर्दी ही रहती है। अपने भारत में तो बहुप्रज जातियाँ होती हैं जो दो से लेकर सात पीढ़ियाँ तक उत्पन्न करती हैं। औद्योगिक लाभ की दृष्टि से आजकल अण्ड–स्फोटन का समय यानी अण्डे के फूटने पर इल्ली के निकलने का समय कृत्रिम साधनों के द्वारा घटाया व बढ़ाया जा सकता है।

अण्डा फूटने पर जो डिम्भक (शिशु) निकलता है उसे इल्ली कहा जाता है। इल्ली सफेद रंग की और झुर्रियों वाली होती है। इटली के सिर में काटने–चबाने वाले मुखांग, वक्ष में तीन जोड़ी वक्षीय टाँगे तथा उदर में पाँच जोड़ी उदरीय पूर्वपद होते हैं। इसके अतिरिक्त उदर के आठवें खण्ड के ऊपरी तल पर कुछ पीछे की ओर मुड़ा हुआ एक कँटीला उपांग होता है जिसे पृष्ठीय शूक (कण्ठ) कहते हैं।

अण्डे से निकलते ही इल्ली शहतूत की पत्तियाँ खाना आरम्भ कर देती है और यह क्रिया तब तक निरंतर चलती रहती है जब तक कि चार–पाँच दिन बाद वह शिथिओल होकर पहली बार निर्मोचन के लिए या केंचुली बदलने के लिए तैयार नहीं हो जाती। दूसरा निर्मोचन सात दिन बाद होता है और इस प्रकार चार बार निर्मोचन कर चुकने पर जो अन्तिम इल्ली निकलती है वह तीन इंच

लंबी होती है। इस अवस्था में इसकी लार–ग्रंथियों से एक रेशा निकलता है जो हवा के सम्पर्क में आते ही सूखकर सख्त बन जाता है। इसके पश्चात् इल्ली इस अवस्था में लगातार अपने चारों ओर इस रेशे का खोल या घर बुनती रहती है और इसी रचना को कोया या कोश कहते हैं। इल्ली का जीवन–काल सामान्यतया एक महीने का होता है किन्तु शीत–प्रधान देशों में एक से अधिक महीने लग जाते हैं।

इल्ली अपने जीवन–काल में लगभग तीस हजार गुना पत्तियाँ चट कर जाती है। एक टन शहतूत की पत्तियों के खाए जाने के बाद तब कहीं जाकर एक पौंड रेशम प्राप्त हो पाता है। इल्लियों को पालने के लिए दिन में तीन–दिन घ्हण्टे के अन्दर से इन्हें शहतूत की पत्तियों की बारीक कटी हुई कु–ी पाँच–छह बार खाने को दी जाती है। रेशम–कीट के एक औंस अण्डों से तीस हजार से लेकर पचास किलोग्राम कोए प्राप्त होते हैं जिनसे चार–पाँच किलोग्राम के लगभग कच्चा रेशम उपलब्ध होता है।

परिपक्व इल्ली से कोशस्य या प्यूपा का परिवर्धन होता है। इल्ली द्वारा बनाए हुए कोए की लम्बाई डेढ़ इन्च और चौड़ाई पौन इन्च के लगभग होती है। यह सफेद अथवा हल्का पीलापन लिए होता है और इसी में प्यूपा बन्द रहता है। प्रत्येक कोया एक ही धागे का बना होता है और धागे की लम्बाई औसतन 1,000 फुट के करीब होती है।इस धागे का निर्माण छः इन्च प्रति मिनट के हिसाब से होता है। लगातार तीन–चार दिन तक धागा बनाने में व्यस्त रहकर इल्ली करीब एक हजार गज धागा बना पाती है। प्यूपा की लम्बाई

लगभग एक इन्च और चौड़ाई चौथाई इन्च होती है। इसका जीवन–काल दस से पन्द्रह दिन तक का होता है।

कोशस्थ या प्यूपा से जब प्रौढ़ बनता है तो उसे बाहर निकलने के लिए स्थान चाहिए। ऐसी अवस्था में वह अपने मुख से एक क्षारीय द्रव निकालता है जिसके कारण कोए के अगले भाग का रेशम गल जाता है और वहाँ एक छेद हो जाता है। बस इसी छेद द्वारा प्रौढ़ कीट बाहर निकल आता है। यदि सभी प्रौढ़ इसी प्रकार छिद्र करदे बाहर आएँगे तो कोए का धागा एक न रहकर अनेक छोटे–छोटे टुकड़ों में कट जाएगा। इसीलिए कोए को पहले ही पानी में उबाल लेते हैं ताकि प्रौढ़ अन्दर ही मर जाएँ। ऐसा करने के बाद कोए से कच्चा रेशमी धागा उधेड़ लेते हैं और फिर उसे साफ कर लेते हैं।

सभी कोयों को नहीं उबाला जाता, बल्कि कुछ कोयों को प्रौढ़ कीट प्राप्त करने के लिए अलग रख लिया जाता है। इस सारे क्रम को निरन्तर चलाने के लिए कुछ प्रौढ़ कीटों को अलग निकालना अति आवश्यक है, अन्यथा अण्डे यानी रेशम के बीज कहाँ से प्राप्त होंगे जिनसे कि इल्ली, कोया, प्यूपा और अंततः रेशम प्राप्त होता है।

अन्य प्रकार के रेशम–कीट

शहतूत रेशम–कीट या सामान्य रेशम–कीट के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के रेशम–कीट और देवमूँगा रेशम–कीट। इनमें से कुछ जंगली, कुछ अर्धपालित और अन्य पालित हैं।

टसर रेशम–कीट टसर सिल्क देने वाला कीट उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिला, बंगाल तथा असम के जंगलों में पाया जाता है। यह कीट साल, बेर, गूलर, पाकड़ आदि की पत्तियों का आहार करता है। टसर रेशम–कीट की एक अन्य जाति हिमालय की तराई में भी पाई जाती है। जिसके डिम्भक बाँज (ओक) की पत्तियों पर जीवन निर्वाह करते हैं।

एरी रेशम–कीट मुख्य रूप से असम के जंगलों में पायाजाता था परन्तु अब बंगाल, बिहार, उड़ीसा और मद्रास में भी पाया जाता है। इसका पोषण होता है विशेष जाति के एरंड या रेंडी की पत्तियों पर। इस कीट की एक जाति असम और हिमालय के जंगलों के अतिरिक्त चीन में भी पाई जाती है। इन कीटों के कोयों से प्राप्त रेशम 'एरी' कहलाता है। इसका रंग सफेद अथवा इंटिया लाल होता है। इस रेशम के साथ कठिनाई यह है कि यह पूरा एक धागे के रूप में निकाला जाता है।

मूँगा रेशम–कीट असम के जंगलों में पाया जाता है। इस कीट के डिम्भक सिनेमन (दालचीनी), मैचिलिस तथा टेट्रेन्थेरा नामक पौधों की पत्तियाँ खाकर रेशम बुनते हैं। और कोया दूधिया अथवा पीले रंग का होता है। इससे प्राप्त रेशम सफेद अथवा आबनूसी रंग का होता है जो मूँगा रेशम कहलाता है। यह कीट अर्थपलित है और इसकी वर्ष में पाँच पीढ़ियाँ होती हैं।

देवमूँगा रेशम–कीट का वितरण उत्तर–प्रदेश और हिमालय की तराई क्षेत्र तक ही सीमित है। इसके डिम्भक मैचिलिस और

फाइकस वंश के पौधों की पत्तियों का आहार करते हैं। इससे प्राप्त रेशम का धागा काफी मजबूत, लेकिन खुरदरा और मोटा होता है। इसीलिए इसका प्रयोग मछली पकड़ने वाले जाल बनाने में किया जाता है।

रेशम उद्योग

यद्यपि भारत में प्रति वर्ष लगभग दो करोड़ पौंड रेशम बनता है फिर भी आवश्यकता को देखते हुए यह कम है। भारत में तैयार होने वाले रेशम का आधा भाग अकेले कर्नाटक प्रदेश में बनता है। रेशम तैयार करने वाले अन्य प्रान्त असम, बंगाल, पंजाब, कश्मीर और तमिलनाडु हैं। सन् 1934 मे भारत सरकार का ध्यान इस उद्योग की ओर गया और इसके फलस्वरूप एक राजकीय रेशम उद्योग कमेटी की स्थापना की गयी। इसके पश्चात अलग–अलग प्रान्तों में रेशम अनुसन्धान के लिए केन्द्र खोले गये।

दिनेश पाठक

जन्म: मई, 1950, कुमाऊं, उत्तराखंड में। आठवें दशक की पीढ़ी के कथाकार। सभी शीर्षस्थ पत्र–पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कुछ कहानियों का अन्य भाषाओं में अनुवाद। अब तक नौ कहानी संग्रह, दो उपन्यास व एक संपादित पुस्तक प्रकाशित।

कहानी संग्रह: 'शायद यह अंतहीन', 'धुंध भरा आकाश', 'जो गलत है', 'इन दिनों वे उदास हैं', 'रात के बाद', 'अपने ही लोग', 'पारुलदी', 'नस्ल''देखना एक दिन'

उपन्यास: 'यानी अंधेरा', 'नाव न बांधो ऐसी ठौर', 'हवा है (शीघ्र प्रकाश्य)

संपादित पुस्तक: 'आंचलिक कहानियाँ'

संप्रति: परिमल, जे.के.पुरम, छोटी मुखानी, हलद्वानी, उत्तराखंड

देखना एक दिन

... उस पुराने से मकान में दुमंजिले में चाख के अलावा सिर्फ एक कमरा और एक रसोई हुआ करती थी, कुल जमा पाँच लोग रहते थे–बूढ़ी दादी, माँ, पिता और हम दो ...यानी मैं और निम्मी। नीचे का हिस्सा जानवरों के लिए बना हुआ था, पहाड़ों में जिसे 'गोठ' कहा जाता है। उस गोथ में पालतू जानवर तो बंधते ही थे, मेहमानदारी होने पर घर की महिलाओं को भी गोथ का ही आसरा होता था। माँ को तो हमने कई–कई बार गोठ में जानवरों के साथ सोते देखा है। गोठ के नंगे फर्श पर चीड़ के सूखे पत्ते फैला दिए जाते या फिर पुलाव बिछ जाता, ऊपर से एकाध बोरा और बोरे के ऊपर पुरानी चादर डल जाती। बस, यही बिस्तर होता। ओढ़ने के लिए जगह–जगह से थिगली लगी रजाई होती।

माँ के साथ हमारी मुलाकातें बहुत कम होती थीं, ना के बराबर। माँ जैसे हमारे जीवन में थी ही नहीं। सुबह जब तक हमारी आँखें खुलतीं, माँ आसपास कहीं नहीं होती। वह रोज सुबह मुँह अंधेरे ही उठ जाती, अंधेरे में ही स्नानादि से निवृत्त होकर पानी लेने लल देती। मुझे अऔर निम्मी को वह सुबह उस वक्त दिखाई देती जब हम स्कूल जाने के लिए तैयार हो रहे होते। माँ उस वक्त सुबह के पानी की अंतिम खेप ला रही होती। गाँव में पानी की धारा एकदम नीचे पहाड़ी ढ़लान पर थी, लगभग आधे किलोमीटर उतार पर। सुबह–सुबह पाँच–छह खेप पानी लाना होता था। माँ पानी लाती, रसोई के बरतनों में खाली करती और हाँफती साँस के साथ दुबारा पानी के लिए चल देती। आखिरी खेप के बाद थकी हुई माँ जब कुछ

देर के लिए सीढ़ी पर सुस्ताने बैठती तो हमें भी दिखाई देती। हम उसके पास चले जाते। वह हमारे सिर पर प्यास से हथेली फेरती। हमें पुचकारती। तभी चाख में बैठी सिगडी पर चाय उबालती दादी का हबोड़ता हुआ स्वर सुनाई देता, 'अरे, तुम लोग क्या घेरे बैठे हो महतारी को? उसे काम करने दो...।' माँ तत्काला उठ खड़ी होती।

दादी और पिता चाख में बैठकर आराम से चाय पीने लगते। वह सुबह की पहली चाह होती। पहाड़ी गाँव की मनोरम सुबह। सूरज अभी नहीं निकला होता। चिड़ियों की चहचहाहट से वातवरण गुर्जित हो रहा होता। दिशाएँ एकदम साफ होतीं। सफेद धवल हिमालय अपनी पूरी ताजगी में होता, दिव्य, भव्य। हम आँगन के बड़े पत्थर पर बैठे मुँह–हाथ धो रहे होते। तभी झाड़ू–बुहारी पर लगी माँ को दादी का हुक्म सुनाई देता, 'ले, चाय पी ले पहले। फिअर फुरती से गोठ हो लेना।' माँ को जैसे इसी हुक्म का इंतजार होता। वह थकी, एकदम पस्त चाख में आकर बैठ जाती। मिश्री या गुड़ की डली के साथ चाय सुड़कने लगती। उसके लिए वह चाय नहीं जैसे अमृत होता। थकान मिटती, साँसें वपस सम गति में चलने लगती। चाय से निवृत्त होकर माँ को तुरंत भैंस दुहनी होती थी। वह दूध का बरतन लेकर गोठ के हवाले हो जाती। दूध निकालकर.बरतन चाख में बैठी दादी को सौंपना होता था। माँ वपस गोठ की सफई में जुट जाती। गोथ से गोबर–खाद निकालकर आँगन से नीचे बाड़े में एकत्र करना होता। यह काम भी माँ के ही जिम्मे रहता था। दादी का काम था दूध को सिगड़ी पर रखना, उबालना फिर स्कूल जाने से पहले रात की बासी रोटी के साथ

हमेम कटोरी भर दूध परोसना। हमें आश्चर्य होता था,दूध पिता भी पीते थे, दूध दादी भी लेती थीं, पर माँ के हिस्से दूध कभी नहीं आता था। बचे हुए दूध में से थोड़ा चाय के लिए अलग निकालकर शेष को दही की ठेकी में डाल दिया जाता, जमाने के लिए।

हालाँकि हम छोटे थे, ज्यादा कुछ नहीं समझते थे, पर माँ को दूध न मिलना हमें बहुत अखरता था। पर हम कर ही क्या सकते थे। दादी से न तो कुछ कह सकते थे, न पूछ सकते थे। दादी कड़क मिजाज महिला थीं। पिता भी दादी से दबते थे, उनके सामने चुप ही रहते। हम एक ही काम कर सकते थे, वही करते भी थे। हमें जब कभी मौका मिलता, और यह मौका महीने के उन तीन दिनों में ही मिलता था जब माँ गोठ के हवाले होती। उन तीन दिनों में घर के कई काम माँ के लिए वर्जित रहते थे। माँ की एक तरह से छु-ी होती थी। न वह पानी लेने जाती, न रसोई में प्रवेश कर सकती। ऐसा क्यों होता था, यह तब हम नहीं जानते थे।उन तीन दिनों में अपने हिस्से का दूध लेकर हम माँ के पास गोथ चले जाते। माँ से अनुनय करते कि वह यह दूध पी ले। माँ बहुत मना करती, हमारे हिस्से का दूध पीना नहीं चाहती, पर अंततः हमारी जिद के आगे उसे झुकना पड़ता। वह जल्दी से दूध को हलक के नीचे उतार लेती। हमारे चेहरे पर संतोष का भाव उभर आता।

उन तीन दिनों में माँ को छूना भी वर्जित होता था। छू जाने पर शरीर पर गोमूत्र का छींटा मारना होता। दादी के लिए वे बहुत घमासान दिन होते थे। वह सुबह से ही चिल्लातीं, हल्ला मचातीं, झल्लातीं। दरअसल दादी को तब काम करना पड़ता था। काम करने

की अब उन्हें नहीं रही थी। भारी काम पिता करते। सुबह–सुबह धारे से पानी भी वही लाते।

लेकिन पिता को नौकरी पर भी जाना होता था। पिता पास मेम ही गाँव की पाठशाला में सहायक अध्यापक थे। हम भी पिता के साथ ही पाठशला जाते।

तीन दिन बाद फिर वही हाल होता। माँ सुबह से ही बैल की तरह काम पर जुट जाती। हम स्कूल से लौटते तब भी माँ घर पर नहीं मिलती। काम पर ही लगी होती। वह या तो जंगल गई होती या खेतों में जुटी होती। गर्मियों में स्कूल के बाद हम सभी दिन का खाना खत्म कर चुके होते, तब जाकर माँ दिखती। मुँह–हाथ धोकर अकेले रसोई में बैठती, बचा–खुचा जो भी शेश होता खाती। खाना खाकर निपटती तो जूठे बरतनों का ढेर उसे ताक रहा होता। आँगन में बरतन मांजने वाली जगह पर बैठकर वह बरतन साफ करती। बरतनों से नोपटकर कुछ पल सुस्ताती, फिर दरांती और टोकरी लिए अगले काम के लिए तैयार हो जाती। हमें विचित्र लगता, माँ के लिए ढ़ंग से विश्राम का भी कोई क्षण नहीं होता था।

स्कूल की छु–ी के दिन, यदि स्कूल की छु–ी के दिन, य़दि माँ आसपास कहीं खेत में नहीं होती, जंगल नहीं गई होती तो मैं और निम्मी माँ के पीछे खेत पर पहु~ंच जाते। हालाँकि ऐसा यदा–कदा ही होता, पर माँ हैरान होती। डरते–डरते कहती, 'तुम लोग क्यों आए यहाँ? जाओ, घर जाओ। दादी डाटेंगी।' निम्मी मुँह फुलाते, होंठ बिचकाते हुए कहती, 'डाँटने दो...।' पर माँ नहीं मानती, हमें

मनाती, कहती, 'तुम मेरे अच्छे बच्चे हो, होS ना? सो अब जाओ तुम लोग। तुम्हारे बाबू भी तुम्हें ढ़ूँढ़ रहे होंगे...।'

हम लौट आते। अतृप्त, प्यासे। एकाधिक बार दादी ने सच में ही हमें डाँट दिया था। हमें झिंझोड़ते, हबोड़ते हुए पूछा था, 'कहाँ चले गए थे तुम लोग?'

हम चुप रहे थे। हमने कोई जवाब नहीं दिया था। तब गुस्सा करती दादी अपने कर्कश स्वर में चिल्लाई थी, 'जरूर अपनी महतारी के पीछे गए होगे।'

दादी को ऐसा चीखता हुआ कर्कश स्वर पता नहीं कैसे मिला था।

हमने कोई प्रतिवाद नहीं किया था। हम चुप ही बने रहे थे।

'क्यों गए तुम लोग?' दादी का गुस्सा अब पूरे उठान पर था। 'खुद तो कुछ करोगे–धरोगे नहीं, महतारी को भी काम नहीं करने दोगे?'

निम्मी को सहन नहीं हुआ था। उसने तीखा, कसिला–सा मुँह बनाया था और उसी अंदाज में बिदकते हुए बोली थी, 'माँ नहीं तो और कौन करता हैकाम? वही तो सारा काम करती है...'

'क्याS... क्याSS कहा छोकरी तूने? दादी का स्वर सातवें आसमान पर था, आसपास के सभी घरों को दहलाता हुआ।"और सब तो घर में खाली बैठे रहते हैं। एक तेरी महतारी ही तो सारा काम

करती है...'

'हाँS, वही तो करती है...बाकी सब तो बैठे ही रहते हैं...।' निम्मी ने दोबारा कहा था। स्वर में स्पष्ट गुस्सा था।

दादी ने लपककर निम्मी की चोटी पकड़ी थी और उठाकर दो–तीन थप्पड़ घल पर रसीद कर दिए थे। बोली, 'जरूर तुम्हारी महतारी ही यह सब सिखाती होगी। आने दे आज उसे।'

वह एक भयावह अनुभव सिद्ध हुआ था। शाम को जैसे ही माँ खेत से लौटकर आई थी, दादी ने माँ का खासा श्राद्ध कर डाला था। खूब खरी–खोटी सुन/अई थी। चूल्हे से जलती लकड़ी लाकर पीठ पर चोट भी जमा दी थी। चिल्ला–चिल्लाकर पिता के कानों में जहर भरा था। गुस्साए पिता ने निम्मी को तो पीटा ही था, बीच–बचाव कर रही माँ की भी धुनाई कर दी थी।

दादी यही चाहती थीं। दादी ने तृप्ति की एक गहरी डकार ली थी।

उस रात माँ ने कुछ नहीं खाया था। निम्मी भी भूखे ही सो गई थी।

यह कोई पहली घटना नहीं थी। ऐसी घटनाएँ कऐ बार हो जाती थीं। दादी जब भी माँ से नाराज होतीं तो पिता के कान भरती थीं। पिता बिना कुछ भी सोचे माँ पर दो–चार हाथ धर देते।

शाम को जंगल से लौटकर माँ को एक बार फिर पानी के

लिए जाना होता था। सुबह का पानी दिन भर में खत्म हो चुका होता। उतरते अँधेरे में माँ भागती हुई पानी के लिए जाती। दो गगरी पानी लाते–लाते अँधेरा पसरने लगता। अब शाम के दूध दुहने का वक्त होता। मा~ं गोठ चली जाती। दूध निकालने के बाद जानवरों को चारा देती। सुबह के लिए धान कूटती। रात की रसोई संभालती। माँ बस चकरघिन्नी की तरह घूमती रहती।

रात हम जल्दी सो जाते। हमें पता ही नहीं चलता, माँ ने कब रात का खाना खाया, कब रात के बरतन साफ किए, कब सोने गई।

कुछ समय से माँ बीमार रहने लगी थी। हर पल, हर क्षण थकी हुई लगती। आँखों के नीचे कालपन घिर आया था। जरा सा परिश्रम पर हांफने लगती, खाँसती। पर पहाड़ में औरत तब तक बीमार नहीं होती, जब तक कि वह चारपाई ही न पकड़ ले चारपाई पकड़ने तक वह घिसटती ही रहेगी, मरती–खपती रहेगी।

एक शाम कुछ औरतें माँ को घर तक छोड़ गई थीं। माँ दोपहर बाद घास के लिए जंगल गई हुई थी। घास काटते हुए पहाड़ी ढलान पर उसका पाँव फिसलना था और वह कई फीट नीचे चली गई थी। माँ लहूलुहान थी और अर्धबेहोशी की हालत में थी। औरतें बता रही थीं कि फिसलकर गिरने से माँ के पेट में पल रहा बच्चा भी गिर गया था। माँ की साड़ी पेट के नीचे से पूरी तरह लाल थी, रक्तसनी। निम्मी माँ की हालत देखते ही चीख पड़ी थी। मुझे भी बदहवास रोना आ गया था। समझ नहीं पाया था कि मैं कैसे माँ की मदद कर सकता हूँ। दादी ने चिल्लाना शुरू कर दिया था, वह रह–

रहकर माँ के मायके से जुड़े पूरे खानदान का श्राद्ध करने लगी थी। तभी एक औरत बोली थी, 'यह गाली देने का बखत नहीं है...। दीज्यू की हालत बहुत खराब है।'

बड़ी मुश्किल से माँ को बचाया जा सका था।

सिर्फ सप्ताह भर का विश्राम मिला था। आठवें दिन माँ उठी थी और सदा की तरह रोजमर्रा वाले कामों में जुट गई। इन सात दिनों में भे माँ को लगातार गालियाँ ही सुनने को मिली थीं। माँ पर तरह–तरह के आरोप लगते रहे थे। दादी ने पल भर के लिए भी चैन से नहीं रहने दिया था।

माँ उठकर काम में जरूर लग गई थी पर उसे देखकर साफ लगता था कि उसकी हालत अभी काम पर जाने लायक नहीं है। वह शक्तिहीन हो गई थी। चेहरा एकदम पीला पड़ गया था। आँखें धंस गई थीं। धीरे–धीरे वह पीला चेहरा काला पड़ने लगा था। खांसी ज्यादा तेज गति से उठने लगी थी। होंठ हर वक्त पपड़ाए रहते। एक दिन हमारे सिर पर हाथ फेरते हुए माँ बोली थी, 'रात को बुखार भी आता है। लगता है, अब मैं नहीं बचूँगी रेS। मेरे बाद तुम लोग इसी तरह रहना, प्यार से। कभी झगड़ना मत...' माँ ने एक फीकी मुस्कान हमारी ओर फेंकी थी।

हम दोनों अरोने लगे थे। माँ भी हमारे साथ रोने लगी थी। वह माँ का आखिरी रोना था। अगले दिन अपने बिस्तर पर माँ बेहोश मिली थी। माँ को चारपाई में लादकर दस किलोमीटर दूर प्राथमिक चिकित्सालय ले जाया गया था। पर माँ जब लौटी तो वह सिर्फ देह

थी, मरी हुई देह।

माँ को गुजरे हुए बारह ही दिन बीते थे कि पिता के दूसरे विवाह की चर्चा शुरू हो गई थी। दादी तत्काल विवाह चाहती थीं। हमने सुना तो अजीब लगा था। एक तो हम वैसे ही सदमें में थे। इतनी कम उम्र में मातृविहीन हो गए थे। ऊपर से पिता की दूसरी शादी की कल्पना मात्र से ही हम घबरा उठे थे। हमने कहानियों में सौतेली माँ के बारे में बहुत सुना था। हमारी किताब में भी सौतेली माँ वाली के कहानी थी। हमारे हिसाब से सौतेली माँ बहुत खतरनाक होती थी। उसके घर में आते ही बच्चे पूरी तरह अनाथ हो जाते हैं। सौतेली माँ बच्चों को बहुत मारती है, उन्हें ठीक से खाना नहीं देती, उनसे कथिन मेहनत कराती है। उनके पिताभी उनसे छीन लेती घै। उन पर भयानक अत्याचार करती है। इस घर में भी सौतेली माँ आएगी, यह सोचकर ही हमारी जान हलक पर आ लगी थी। हम सौतेली माँ के नाम से ही बहुत सिहर गए थे। हर पल डरे–डरे से रहने लगे। घबराए। पिता ने हमारे डर को शायद लक्ष्य किया था। एक दिन ठीक माँ की ही तरह हमारे सिर पर हाथ फिराते हुए पूछा था, 'माँ की बहुत याद आती है?'

'हाँS...' हम दोनों बहुत सुबके थे। हमें रोना आ गया था। निम्मी तो जोर–जोर से ही रोने लगी थी। पिता ने उसे पुचकारा तो रोती हुई निम्मी एकदम से बोली थी, 'बाबू, सौतेली माँ मत लाना...वह हमें मारेगी...।' सुनकर पिता शायद विचलित हुए थे। उन्होंने गर्दन हिलाकर हामी भरी थी। बोले, 'नहीं लाऊँगा...अब खुश?'

हम सचमुच खुश हुए थे। निम्मी तो एकदम खिल उठी थी।

पर ऐसा हुआ नहीं था। पहाड़ बिना औरत के नहीं चल पाता, कदम भर भी नहीं खिसक पाता। घर के लिए औरत की जरूरत हो न हो, पर खेतों के लिए जरूरत होती है, घास–जंगल के लिए जरूरत होती है। पहाड़ की जिंदगी औरत के हाड़तोड़ परिश्रम की धुरी पर ही घूमती है। पहाड़ दरअसल औरत की हड्डियों पर खड़ा रहता है।

दादी हालाँकि बहुत बूढ़ी नहीं थीं। पर सास बनने के काम करने की उनकी आदत लगभग छूट चुकी थी। वैसे भी, सास बनने के बाद औरतें अपने ऊपर हुए अत्याचार को बहू पर लाद देती थीं। बदला जैसे घर की बहू से लेती थीं। दादी लगातार पिता पर दबाव बनाए हुए थीं। पिता टालते जाते। पर वह टलना ज्यादा नहीं हो सका। खेत बंजर पड़ने लगे थे। पशुओं का चारा छूटने लगा था। भंस ने दूध देना बंद कर दिया था। पानी की प्रतिदिन हायतोबा मची रहती थी। दादी अलग से अपना दुखड़ा रोती रहतीं। अंततः पिता मान गए थे।

एक दिन सौतेली माँ की डोली घर पर उतर ही आई थी। गाँव के लोगों के अलावा रिश्तेदारों से घर भरा हुआ था। पर इस दौर में मैं और निम्मी पूरी तरह नदारद रहे थे। सारा तमाशा दूर–दूर से ही देखते रहे। कई बर हमारी खोज भी हुई थी, दादी ने जमकर फटकारा भी था, पर हम पर कोई असर नहीं हुआ था। हम एकदम विलग रहे थे। विवाह में शामिल होने हमारी बुआ भी आई थीं। वह हमें बाँहों में भरकर खूब रोई। शायद वह भी डरी हुई थी।

जब सारे नाते–रिश्ते वले चले गए तो पिता ने हमें बुलाया था। सौतेली माँ से हमें मिलाते हुए कहा था, 'डरो मत, यह तुमसे बहुत प्यार करेगी...।'

दिन निकलने लगे। अच्छा था कि सौतेली माँ से सीधा कोई संपर्क नहीं था। भोजन–पानी सब दादी के हथ में था। पाठशाला जाने की तैयारी हम खुद कर लेते थे। वैसे भी, सौतेली माँ के पास भी हमारे लिए फ़ुरसत नहीं थी। वह भी सदा काम में ही व्यस्त रहती, हर पल कहीं न कहीं अपने हाड़ तोड़ रही होती, ठीक माँ की तरह। कभी जब वह हमें देखती तो हमारी ओर अपनी मुस्कराहट फेंकना नही भूलती। हम उस मुस्कराहट को स्वीकार नहीं करते, तत्काल दूर हट जाते। कई बार सुस्ताने की गरज से जब वह आँगन में बैठती, हमें भी आसपास देखती तो इशारे से अपने निकट बुलाने की कोशिश करती, खास तौर से निम्मी को बुलाती। हम उठते और दूसरी ओर चले जाते। ऐसा कई बार हो चुका था।

एक दिन सौतेली माँ गज्यो (सूखी घास) का ग—र आँगन से सटे बाडे में उतारकर वहीं बैठ गई थी। वह सुस्ताने लगी। कुछ पल सुस्ताने के बाद अपने कपड़ों से गाज्यो के चिपके तिनकों को बीनने लगी। उसके बालों में भी सूखी घास के तिनके चिपके हुए थे। माँ का हाल भी यही होता था। माँ हमें देखती तो आवाज देकर हमासे उन तिनकों को अलग करने के लिए कहती। पर सौतेली माँ अकेली ही वह काम कर रही थी। हम दूर से उसे देख रहे थे। हम पर नजर पड़ते ही उसने उन तिनकों को बीनना बंद कर दिया था। बहुत प्यार से मुस्कराई थी। बोली, 'इधर आओ...।'

नहीं, इस हँसी में नहीं आना है, इस बोल में भी नहीं। हमने तत्कल तय कर लिया था।

लेकिन वह निराश नहीं हुई थी। अपने आँचल से कोई वस्तु बाहर निकालते हुए लगभग मनुहार करते स्वर में बोली थी, 'देखो, एक बार आ जाओ, फिर चाहे कभी मत आना...कब्भीनहीं।' उसने शब्दों पर जोर दिया था।

हमने एक–दूसरे की ओर देखा था। हम अचानक ही उस मनुहार करते स्वर के सम्मोहन में बंध गए थे। पहले निम्मी उठी थी, फिर मैं उथा। हम धीरे–धीरे, किंतु सधे कदमों से सौतेली माँ के निकट चले आए थे।

'बैठो...' सौतेली माँ ने कहा था। वह खुश थी कि हम उसके पास तक आ गए थे। पर हम बैठे नहीं खड़े ही रहे।

'अच्छा बताओ, तुम लोग मुझसे नाराज क्यों रहते हो?' सौतेली माँ ने हमसे सवाल किया था, 'मुझसे बोलते भी नहीं...।'

'क्योंको तुम हमारी सौतेली माँ हो...और सौतेली माँ बहुत खराब होती है।' निम्मी झट से बोली थी। निम्मी की आज भी यही आदत है। कोई भी बात हो वह झट से बोल देती है, बिलकुल मुँहफट है।

सौतेली माँ हँस दी थी। उसके झक्क सफेद दाँत पूरे के पूरे दिखाई दे रहे थे। बोली, 'तुम लोग ठीक कहते हो। सौतेली माँ अच्छी नहीं होती, बिलकुल नहीं होती। पर मैं तुम्हारी सौतेली माँ कहाँ

हूँ...तुम्हारी मौसी हूँ, और मौसी तो माँ से भी ज्यादा प्यार करने वाली होती है...है कि नहीं?'

निम्मी फक्क से हँस दी थी। मैं भी हँस दिया।

'तो बोलो, आज से हम दोस्त हैं। हमारे बीच कु-ी नहीं, सल्ला है...' उसने हाथ का अँगूठा बढ़ाया-'और येS लो, ये बिस्कुट खाओ...।' सौतेली माँ ने आँचल से बिस्कुट का एक छोटा पैकेट निकालकर हमारी ओर बढ़ाया था।

'येS तुम कहाँ से लाई?' मैंने आश्चर्य से पूछा था।

'मैंने किसी से मंगवाया था। अब तुम खाओ...' सौतेली माँ हँसने लगी थी।

'लेकिन दादी को पता चलेगा तो वह तुमको मारेंगी, हमको भी...' हमें ऐसे कई प्रकरण याद हो आए थे जब ऐसी कितनी बातों पर दादी ने माँ से बहुत दुर्व्यवहार किया था।

'अरे, डरो मत, खाओ...मुझे भी दो...'सौतेली माँ मस्त अंदाज में बोली थी। 'दादी को कुछ पता ही नहीं चलेगा।'

उस दिन हमारा डर थोड़ा हलका हो गया था, फिर धीरे-धीरे बचा हुआ डर भी निकलता गया। कुछ समय बाद हम सच में दोस्त हो गए थे। वह चाहती थी, हम उसे छोटी माँ कहकर पुकारें। हमने ऐसा ही करना शुरू कर दिया था। जैसे एकदम निहाल हो उठी थी। सुनकर चहक उठती, खुशी से भर उठती। हमें गले लगा लेती।

छोटी माँ हमारा बहुत ध्यान रखने लगी थी। हाड़तोड़ काम के बाद जो भी थोड़ा वक्त मिलता, वह भरसक हमारे साथ गुजारती। हमारे नहाने–धोने से लेकर कपड़ों तक का पूरा ध्यान उसे रहता। अब हम स्कोल बिलकुल चकाचक होकर जाते। माँ बेचारी बीमार रहती थी, अशक्त थी, उसे कभी इतनी फुरसत ही नहीं होती थी कि वह हमारी ओर ध्यान दे सके। पर छोटी माँ कैसे भी हो हमारे लिए वक्त निकाल लेती थी। दादी चाहे चीखती रहें, चिल्लाती रहें, छोटी माँ ज्यादा तूल नहीं देती। बहुत हुआ तो कह देती, 'आप चिंता न करें। सब हो जाएगा, सारा काम निपट जाएगा...' दादी झल्लाकर रह जातीं। मायके को लेकर बेहूदी गालियाँ फेंकतीं। रात को पिता से शिकायत करतीं। पिता छोटी माँ को हिदायतें देते और परे हट जाते। देखा जाए तो छोटी माँ की स्थिति भी ठीक माँ जैसी ही थी। कहीं कोई फर्क नहीं था। वह भी जैसे एक गुलाम की तरह थी। उसके साथ भी ठीक वैसे ही व्यवहार होता था जैसा माँ के साथ हुआ करती था। फर्क सिर्फ इतना था कि वह अभी स्वस्थ थी। माँ की तरह बीमार नहीं थी।

हम बड़े होने लगे थे। आगे की पढ़ाई के लिए मैं अल्मोड़ा चला गया था। निम्मी गाँव से ही अपनी पढ़ाई जारी रखे हुए थी। इस बीच दादी स्वर्ग सिधार गई थीं। छोटी माँ को अब जाकर गुलामी से मुक्ति मिली थी, हालाँकि काम के बोझ पर कोई फर्क नहीं पड़ा था, वह और बढ गया था। सिर्फ दादी की बेलगाम सख्ती और उसकी बेहूदी गालियाँ खत्म हुई थीं। जाहिर है, छोटी माँ ने राहत की साँस ली थी।

एक दिन मैं नौकरी पर भी लग गया। नौकरी दिल्ली शहर में लगी थी। निम्मी ने भी प्राइवेट परीक्षा देकर ग्रेजुएशन कर लिया था। पिता चाहते थे अब जल्दी से निम्मी के साथ पीले हो जाएँ। पिता एक सजातीय वर भी खोज लाए थे। लड़का पास के गाँव का था। गाँव के ही निकट सरकारी स्कूल में अध्यापक था। खेती–बाड़ी संतोषजनक थी। पिता को रिश्ता तुरंत जंच गया था। वे खुश थे।

पर छोटी माँ ने भांजी मार दी थी। उसे यह रिश्ता कोई मंजूर नहीं हुआ था। वह एकदम से अड़ गई। पिता ने कितनी ही बार पूछ डाला कि इस रिश्ते में आखिर क्या बुराई है? पर छोटी माँ ने पिता को कोई जवाब नहीं दिया। वह मुझे बुलाने की जिद करने लगी। वह फागुन का महीना था, पहाड़ में अब भी खासी ठंडक थी। होलियों का दौर शुरू हो चुका था। होली पर मुझे गाँव आना भी था। इस बार होली से पहले भी पास की ऊँची चोटियाँ बर्फ से भर गई थीं।

शाम हम सभी अलाव के चारों ओर बैठे थे–पिता, छोटी माँ, मैं और निम्मी। पिता ने निम्मी के विवाह का प्रसंग उथाया था। छोटी माँ को संबोधित करते बोले थे, 'अब बताओ कि तुम क्यों मना कर रही हो? अब नवीन भी आ चुका है...।' छोटी माँ को जैसे इसी अवसर क इंतजार था। मुझसे मुखातिब होती बोली थी, 'सुनो नवीन! मैं नहीं चाहती कि निम्मी पहाड़ में ब्याही जाए, पहाड़ के किसी गाँव में...। तुम्हारे बाबू नहीं समझेंगे, पर शयद तुम समझ सकते हो। पहाड़ में ब्याह होते ही औरत औरत नहीं रह जाती, वह बैल हो जाती है। उसका जीवन पहले दिन से ही मुरझा जाता है। तुमने अपनी माँ को तो देखा ही है, मुझको भी देखा होगा...' छोटी

माँ एक क्षण के लिए चुप हो गई थी। शायद आँखें गीली हो गई थीं। आँचल की कोर से आँखों को पोंछते हुए बोली थी, 'अच्छी–भली बेटी है हमारी, बुरांश के फूल–सी टटक, पढ़ी–लिखी। हो सके तो इसको शहर में कहीं ब्याहो, कोई जरूरी नहीं कि अपनी ही बराबर जाति वाला हो, खात–पीता होना चाहिए, सुखी होना चाहिए। बेटी को सुखी रखना पहला धर्म है। बाकी तुअ लोगों की मरजी...।' छोटी माँ चुप हो गई थी।

कोई कुछ नहीं बोला। निम्मी की आँखें जरूर भर आईं थीं। वह छोटी माँसे लिपटकर सिसकने लगी। उसे अपने से चिपटाते हुए छोटी माँ बोली थी, 'ना, डर मत निम्मी! मैं अपने जीते जी तुझे पहाड़ मेम ब्याहने नहीं दूँगी। मुझे बहुत खुशी होगी, अगर मैं पहाड़ की एक बेटी भी बेटी को बैल होने से बचा सकी...' छोटी माँ का चेहरा दृढ़ता से भरा हुआ था।

वहीए हुआ जैसा छोटी माँ ने चाहा था। निम्मी का विवाह लखनऊ के एक कुमाऊँनी परिवार से संपन्न हुआ था। निम्मी मौज में है। दो बेटे हैं, दोनों बी.टेक. कर रहे हैं। दो साल बाद दिल्ली की नौकरी छोड़ मैं मुंबई चला आया। अब मेरे विवाह की चर्चा भी चलने लगी थी। लखनऊ से निम्मी ने भी एकाध रिश्ता भेजा था। दिल्ली से भी रिश्ते आ रहे थे। पिता को दिल्ली वाला रिश्ता खासा पसंद आया था। पर छोटी माँ वहाँ भी पाँव अड़ाकर बैठ गई। उसे कोई भी रिश्ता पसंद नहीं आ रहा था। नैनीताल, हल्द्वानी के रिश्ते भी नहीं। मुझे लगा छोटी माँ का मन टटोलना होगा।

गर्मियों में गाँव आया था। इस मौसम में कुछ दिनों के लिए निम्मी भी आती थी। घर भरा–भरा सा लगता। पुरानी चहक लौट आती।

उस दिन रात के खाने के बाद हम चाख में बैठे थे। छोटी माँ भी रसोई से निपटकर वहीं आ गई थी। कुछ देर इधर–उधर की बातें होती रहीं। अंततः पिता ने मेरे विवाह का जिक्र छेड़ा था। पिता बता रहे थे कि दिल्ली वाला रिश्ता बहुत अच्छा है, हर तरह से करने योग्य। निम्मी हँसी थी। बोली, 'हाँ, दद्दा, अब शादी कर ही लो...।' छोटी माँ ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की थी। वह चुप बनी रही। मै ही छोटी माँ की ओर मुखातिब हुआ था, 'और तुम्हारी क्या राय है छोटी माँ?'

'मेरी राय?...' छोटी माँ ने गहरी आ~ंखों से पहले कहीं दूर देखा था, फिर मेरी ओर आँखें घुमाते हुए पूछा था, 'कहूँ तो मानेगा?'

'कहो तो सही...।' मैंने छोटी माँ की आँखों में सीधे–सीधे झाँका था। वह चाख की खिड़की से दूर आसमान की ओर देखने लगी थी। आसमान तारों से भरा पड़ा था। शुक्ल पक्ष की रात थी। चंद्रमा की ज्योति झलक रही थी। छोटी माँ कहीं दूर से जैसे फुसफुसाती सी बोली थी, 'मैंने भी तेरे लिए रिश्ता खोजा है। मेरे मायके के रिश्ते में हैं वे लोग। गाँव की लड़की है, गाँव में ही रहती है...।'

'गाँव में...?' मैं अचकचा गया था। पिता ने भी चौंककर

छोटी माँ की ओर देखा था। झल्लाते हुए बोले थे, 'तेरा दिमाग तो ठिकाने पर है ना? निम्मी को तो गाँव में ब्याहने से मना कर दिया और अब नवीन के लिए गाँव की लड़की लाने के लिए कह रही हो? क्या तुम्हारा इरादा अपने लिए बहू लाने का है?' पिता तल्ख हो उठे थे।

छोटी माँ वैसी ही रही, शांत। मेरी ओर देखते हुए बोली, 'अच्छा लगेगा अगर तू गाँव की लड़की से शादी कर लेगा। नहीं, मेरा कोई दबाव नहीं है। दबाव मेरा हो भी नहीं सकता। पर हाँ, मेरी आत्मा को बहुत शांति मिलेगी, और मुझसे भी ज्यादा शंति शायद तुम्हारी कोखजाया की आत्मा को मिले। निम्मी के बाद यदि पहाड़ की एक और लड़की को तू इस पहाड़ की नर्क सरीखी जिंदगी से बाहर निकाल सका तो मैं अपने को बहुत धन्य समझूँगी...तू भी बहुत धन्यवाद का पात्र होगा। बाकी तेरी मरजी...।'

पिता बुरी तरह गुस्सा हो उठे थे। 'तू छोड़ अपने यह क्रांतिकारी विचार। अगर सभी तेरे जैसा ही सोचने लगें तो हो गया पहाड़ का कल्याण। इस तरह तो नाश हो जाएगा पहाड़ का...खत्म हो जाएगा पहाड़...।' पिता ने गुस्से से अपने दोनों हाथ झटकाए थे। पर पिता के गुस्से का छोटी माँ पर कोई असर नहीं हुआ था। वह पूरी तरह शांत बनी रही। शांत स्वर में ही बोली थी, 'वह तो होना ही है, नवीन के बाबू। पहाड़ के खत्म होने को विधाता भी टाल नहीं सकता। जमाने से इस पहाड़ में औरतों के साथ जो दुर्व्यवहार हुआ है, जो अनाचार–अत्याचार हुआ है उसका फल तो मिलना ही है एक दिन। यहाँ की समूची घाटियों में, जंगलों में औरतों की जो

पीड़ा, जो चीत्कार, जो तकलीफें और जो आहें दबी हैं...वह कहाँ जाएँगी आखिर? वह तो फूटना ही है। उसे फूटना भी चाहिए। तुम देखना एक दिन, वह सब जलजला बनकर निकलेगा और येS पहाड़...।' छोटी माँ चुप हो गई। छोटी माँ ने आँखें मूँद लीं।

चाख में सन्नाटा पसर गया...गहरा सन्नाटा।

रामचन्द्र शुक्ला

लेखक का परिचय

रामचन्द्र शुक्ला का जन्म 4 अक्टूबर 1884 को बस्ती अगोना गाँव जिला बस्ती उत्तर प्रदेश मे हुआ था । 1898 मे मिडिल की परीक्षा, 1901 मे एंट्रेस पास की । उनका पहली नौकरी 1904 मे मिशन स्कूल मे ड्रायिंग मास्टर के रूप मे की। उन्होने आनंद कादंबनी का संपादन भी किया । 1908 मे नागरी प्रचारणी सभा के हिन्दी कोश के लिए सहायक संपादक के रूप मे काशी गए ।

1919 मे हिन्दू विश्वविद्यालय मे अद्यापन करते हुए 1937 मे हिन्दी विभागाद्यक्ष बने ।

बीसवी शताब्दी के हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार है। वे एक समीक्षक ,निबन्ध लेखक एवं साहित्यिक इतिहासकार के रूप मे जाने जाते है। शुक्लाजी ने हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा, जिसमे काव्यप्रवृत्तियों एवं कविपरिचय और समीक्षा भी दी गयी है। दर्शन के क्षेत्र मे भी उनकी 'विश्व प्रपंच' उपलब्ध है । यह पुस्तक 'रिडल आफ दि यूनिवर्स' का अनुवाद है। इसकी भूमिका उनका

मौलिक लेखन है । बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाद्यक्ष के पदपर रहते हुए ही उनका स्वर्गवास हुआ।

प्रमुख कृतियाँ :हिन्दी साहित्य का इतिहास, हिन्दी शब्द सागर, चिन्तामणि और नागरी प्रचारिणी पत्रिका।

उत्साह

दु:ख के वर्ग में जो स्थान भय का है,वही स्थान आनन्द–वर्ग में उत्साह का है। भय में हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के नियम से विशेष रूप में दु:खी और कभी–कभी उस स्थिति सेअपने को दूर रखने के लिए प्रयत्नवान् भी होते हैं। उत्साह में हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चय द्वारा प्रस्तुत कर्म–सुख की उमंग से अवश्य प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढता के साथ–साथ कर्म में प्रवृति होने के आनन्द का योग रहता है। साहस–पूर्ण आनन्द की उमंग का नाम उत्साह है। कर्म सौन्दर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

जिन कर्मों में किसी प्रकार का कष्ट या हानि सहने का साहस अपेक्षित होता है उन सब के प्रति उत्कण्ठापूर्ण आनन्द उत्साह के अन्तर्गत लिया जाता है। कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के भी भेद हो जाते हैं। साहित्य –मीमांसकों ने इसी दृष्टि से युद्ध–वीर,दान–वीर,दया–वीर इत्यादि भेद किये हैं। इनमें सबसे प्राचीन और प्रधान युद्ध वीरता है,जिसमें आघात,पीडा क्या मृत्यु तक की परवा नहीं रहती। इस प्रकार की वीरता का प्रयोजन अत्यन्त प्राचीन

काल से पडता चला आ रहा है,जिसमें साहस और प्रयत्न दोनों चरम उत्कर्ष पर पहुँचते हैं। पर केवल कष्ट या पीडा सहन करने के साहस में ही उत्साह का स्वरूप स्फुरित नहीं होता । उसके साथ आनन्द–पूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कण्ठा का योग चाहिए । बिना बेहोश हुए भारी फोडा चिराने को तैयार होना साहस कहा जायेगा,पर उत्साह नहीं । इसी प्रकार चुपचाप,बिना हाथ–पैर हिलाये,घोर प्रहार सहने के लिए तैयार रहना साहस और कठिन–से–कठिन प्रहार सहकर भी जगह से न हटना धीरता कही जायेगी। ऐसे साहस और धीरता को उत्साह के अन्तर्गतभी ले सकते हैं जबकि साहसी या धीर उस काम को आनन्द के साथ करता चला जायेगा जिसके कारण उसे इतने प्रहार सहने पडते हैं । सारांश यह कि आनन्दपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कण्ठा में ही उत्साह का दर्शन होता है, केवल कष्ट सहने के निश्चेष्ट साहस मेंनहीं।

दान–वीर में अर्थ–त्याग का साहस अर्थात् उसके कारण होने वाले कष्ट या कठिनता को सहने की क्षमता अन्तर्हित रहती है । दानवीरता तभी कही जायेगी जब दान के कारण दानी को अपने जीवन–निर्वाह में किसी प्रकार का कष्ट या कठिनता दिखाई देगी। इसी कष्ठ या कठिनता की मात्रा या सम्भावना जितनी ही अधिक होगी, दान वीरता उतनी ही ऊँची समझी जायेगी । पर इस अर्थ–त्याग के साहस के साथ ही जब तक पूर्ण तत्परता और आनन्द के चिन्ह न दिखाई पडेंगे तब तक उत्साह का स्वरूप न खडा होगा।

युद्ध के अतिरिक्त संसार में और भी ऐसे विकट काम होते हैं जिसमें घोर शारीरिक कष्ट सहना पडता है और प्राण–हानि तक की

संभावना रहती है । अनुसंधान के लिए तुषार–मण्डित अभ्रभेदी अगम्य पर्वतों की चढाई,ध्रुव देश या सहारा के रेगिस्तान का सफर क्रूर,बर्बर जातियों के बीच अज्ञात घोर जंगल में प्रवेश इत्यादी भी पूरी वीरता और पराक्रम के कर्म हैं । इनमें जिस आनन्दपूर्ण तत्परता के साथ लोग प्रवृत्त होते हैं वह भी उत्साह ही है ।

समाज सुधार के वर्तमान आन्दोलनों के बीच जिस प्रकार सच्ची अनुभूति से प्रेरित उच्चाशय और गम्भीर पुरुष पाये जाते हैं उसी प्रकार कुच्छ मनोवृत्तियों द्वारा प्रेरित साहसी और दयावान भी बहुत मिलते हैं । उत्साह की गिनती अच्छे गुणों में होती है । आत्म – रक्षा ,पर – रक्षा, देश – रक्षा आदि के निमित्त साहस की जो उमंग दिखाई देती है उसके सौंदर्य को परपीडन,डकैति आदि कर्मों का साहस कभी नहीं पहुँच सकता । यह बात होते हुए भी विशुद्ध उत्साह या साहस की प्रशंसा संसार में थोडी–बहुत होती ही है ।

जब तक आनन्द का लगाव किसी क्रिया,व्यापार या उसकी भावना के साथ नहीं दिखाई पडता तब तक उसे 'उत्साह' की संज्ञा प्राप्त नहीं होती । यदि किसी प्रिय मित्र के आने का समाचार पाकर हम चुपचाप ज्यों के त्यों आनन्दित होकर बैठे रह जाय या थोडा हँस भी दें तो यह हमारा उत्साह नहीं कहा जायेगा । हमारा उत्साह तभी कहा जायेगा जब हम अपने मित्र का आगमन सुनते ही उठ खडे होंगे । उससे मिलने के लिए दौड पडेंगे और उसके ठहरने आदि के प्रबन्ध में प्रसन्न–मुख इधर–उधर आते–जाते दिखाई देंगे । प्रयत्न और कर्म संकल्प उत्साह नामक आनन्द के नित्य लक्षण है ।

कर्म के अनुष्ठान में जो आनन्द होता है उसका विधान तीन

रूपों में दिखाई पडता है–

1. कर्म–भावना से उत्पन्न
2. फल–भावना से उत्पन्न और
3. आगन्तुक,अर्थात् विषयान्तर से प्राप्त।

उत्साह वास्तव में कर्म और फल की मिली–जुली अनुभूति है जिसकी प्रेरणा से तत्परता आती है। कर्म के मार्ग पर आनन्दपूर्वक चलता हुआ उत्साही मनुष्य यदि अन्तिम फल तक न भी पहुँचे तो भी उसकी दशा कर्म न करने वाले की अपेक्षा अधितर अवस्थाओं में अच्छी रहेगी; क्योंकि एक तो कर्म–फल में उसका जो जीवन बीता वह संतोष या आनन्द में बीता,उसके उपरान्त फल की अप्राप्ति पर भी उसे यह पछतावा न रहा कि मैंने प्रयत्न नहीं किया।

कर्म में आनन्द अनुभव करने वालों ही का नाम् कर्मण्य है। धर्म और उदारता के उच्च कर्मों के विधान में ही एक ऐसा दिव्य आनन्द भरा रहता है कि कर्ता को वे कर्म ही फलस्वरूप लागते हैं। इसी प्रकार यदि हमारा चित्त किसी विषय में उत्साहित रहता है तो हम अन्य विषयों में भी अपना उत्साह दिखा देते है। यदि हमारा मन विशाल चिन्तनों में रहता है तो हम बहुत से काम प्रसन्नतापूर्वक करने के लिए तैय्यार हो गाते है।

चिन्तामणि से–

पारिभाषिक शब्दावली

1. Account - लेख
2. Act - अधिनियम / कृत्य
3. Action - कार्यवाई
4. Adjustment - समायोजन
5. Advance - अग्रिम/पेशगी,
6. Advice - सलाह,
7. Affidavit - शपथ–पत्र,
8. Agent - अभिकर्ता,
9. Balance - शेष/बाकी,
10. Bankruptcy - दिवालियापन,
11. Board of Director - निर्देशक बोर्ड,
12. Borrower - ऋणी/उधारकर्ता,
13. Capital - पूँजी/मूलधन,
14. Case - प्रकरण,
15. Cash - नकदी,
16. Charge - प्रभार/कार्यभार,
17. Custodian - अभिरक्षक,
18. Customs - सीमाशुल्क,
19. Clearing - समाशोधन,
20. Commission - आयोग/कमीशन
21. Cheque - चेक,
22. Commodity - पदार्थ/वस्तु,

23. Compensation - क्षतिपूति/मुआवजा,
24. Condition - शर्त/स्थिति,
25. Confidential - गोपनीय,
26. Credit - जमा/साख,
27. Data - आँकडे,
28. Deduction - कटौती/कमी,
29. Deed - विलेख,
30. Dividend - लाभांश,
31. Enclosure - संलग्नक/अनुलग्नक,
32. Entrepreneur - उद्यमी,
33. Equipment - उपकरण,
34. Encashment - नकदीकरण,
35. Exchange value - विनिमय मूल्य,
36. Fact - तत्थ,
37. Forgery - जालसाजी/कूटरचना,
38. Farmers's Market - कृषि मंडी,
39. Grant - अनुदान,
40. Grade - श्रेणी.
41. Honorarium - मानदेय,
42. In Advance - अग्रिम रूप से /पहले से,
43. Initials - लघुहस्ताक्षर/आद्यक्षर,
44. Invoice - बीजक/इन्वाइस,
45. Installment - किश्त,
46. Invalid - अवैध,

47. Inspection - निरीक्षण,
48. Joint account - संयुक्त लेखा,
49. Joining report - कार्यग्रहण रिपोर्ट,
50. Junior - अवर,